चार अध्याय

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

अनुवादक

धन्यकुमार जैन

विश्वभारती ग्रन्थालय

२१०, कर्नवालिस स्ट्रीट, कलकत्ता

विश्वभारती ग्रन्थ-प्रकाशन विभाग
२१०, कर्नवालिस स्ट्रीट, कलकत्ता
प्रकाशक—श्रीकिशोरीमोहन साँतरा

चार अध्याय

प्रथम संस्करण - - - चैत्र, १९९३

मूल्य १॥)

प्रवासी प्रेस, १२०।२, अपर सरकुलर रोड
कलकत्तेसे श्री माणिकचन्द्र दास द्वारा मुद्रित

चार अध्याय

चार अध्याय

भूमिका

एलाको याद पड़ता है, उसके जीवनका प्रारम्भ विद्रोहमें से हुआ था। उसकी मा मायामयीके स्वभावमें कुछ सनक-सी थी, उनका व्यवहार विचार-विवेचनाके प्रशस्त पथपर नहीं चल पाता था। अपने बेहिसाबी मिजाजके असंयत झोकोंसे अपनी गृहस्थीको वे आये-दिन क्षुब्ध कर डाला करतीं थीं,—अन्यायके साथ शासन करतीं और बिना-कारण सन्देह करतीं। लड़की जब किसी अपराधको मंजूर करती, तो वे चटसे कह बैठतीं—झूठ बोल रही है। और लड़कीका यह हाल था कि बिना मिलावटके शुद्ध सच कहनेका उसे व्यसन-सा पड़ गया था। इसलिए उसीको सबसे ज्यादा सजा मिली। सब तरहके अन्यायके विरुद्ध असहिष्णुता उसके स्वभावमें प्रबल हो उठी। उसकी माने समझा कि यह बात स्त्री-धर्मनीतिके विरुद्ध है।

एक बात उसने बचपन ही से समझ ली थी कि अत्याचारका प्रधान वाहन है। उसके परिवारमें जितने भी आश्रित अन्नजीवी थे, जो पराये अनुग्रह-निग्रहके संकीर्ण घेरेमें निःसहाय रूपसे आबद्ध थे, उन्हीं लोगोंने उसके परिवारकी आबहवाको कलुषित किया है, उन्हीं लोगोंने उसकी माकी अन्ध प्रभुत्व-चर्चाको बाधाहीन कर डाला है। इस अस्वास्थ्यकर अवस्थाकी प्रतिक्रियाके रूपमें ही उसके मनमें छोटी उमरसे ही स्वाधीनताकी आकांक्षा इतनी दुर्दमनीय हो उठी थी।

एलाके पिता नरेशचन्द्र गुप्त विलायत जाकर वहाँके विश्वविद्यालयसे साइकॉलॉजीमें डिग्री हासिल कर लाये हैं। उनकी वैज्ञानिक विचारशक्ति तीक्ष्ण है, अध्यापन-कार्यमें वे विशेष रूपसे यशस्वी हैं। प्रान्तीय प्राइवेट कालेजमें वे काम करते हैं, क्योंकि उसी प्रान्तमें उनका जन्म है; गार्हस्थिक उन्नतिकी तरफ उनका लोभ कम है और उस विषयमें दक्षता भी साधारण है। गलतीसे आदमीपर विश्वास करके अपनी हानि कर लेते हैं, बार-बार अनुभव होनेपर भी इस बातका वे सुधार न कर सके। ठगकर या आसानीसे जो उपकार वसूल करते हैं, उनकी कृतघ्नता सबसे बढ़कर अकरुण होती है। जब वह प्रकट हो जाती, तो वे उसे मनस्तत्त्वका विशेष तथ्य समझकर अनायास ही स्वीकार कर लेते हैं, मन या मुँहसे शिकायत नहीं करते। सांसारिक बुद्धिकी त्रुटियोंके लिए कभी उन्हें स्त्रीसे क्षमा नहीं मिली, हमेशा उलाहने ही सहे हैं। शिकायतके कारण पुराने हो जानेपर भी उनकी स्त्री उन्हें कभी भूलती ही न थीं, जब-है-तब उन्हीं बातोंकी तेज सुई चुभो-चुभोकर उन्हें जरा भी दम न लेने देतीं।

मनुष्यपर अपने सहज-विश्वास और उदारताके कारण पिताको बार-बार ठगाते और दुःख पाते देख उनपर एलाका सदा-व्यथित स्नेह था—जैसा सकरुण स्नेह माका अपने नासमझ बच्चेपर होता है। सबसे बढ़कर उसे चोट पहुँचती थी तब, जब उसकी मा कलहकी भाषामें तीव्र इशारा करती थीं कि बुद्धि-विवेचनामें वे अपने पतिसे श्रेष्ठ हैं। एलाने अनेक अवसरोंपर माके द्वारा पिताका असम्मान देखा है, यहाँ तक कि कभी-कभी उसके निष्फल क्रोधावेशमें आँसुओंसे रातको उसका तकिया तक भींग गया है। इस तरहके अतिके धैर्यको अन्याय समझकर एलाने बहुत बार अपने पिताको मन-ही-मन अपराधी ठहराया है।

अत्यन्त दुःखित हो, एक दिन एलाने अपने पितासे कहा—"इस तरह चुपचाप अन्याय सह लेना ही अन्याय है।"

नरेशने कहा—"स्वभावके विरुद्ध प्रतिवाद करना और गरम लोहेपर हाथ फेरकर उसे ठंडा करना, दोनों एक ही बात है, एला। इसमें वीरता हो सकती है, पर आराम नहीं।"

"चुप बने रहनेमें आराम और भी कम है"—कहकर एला जल्दीसे चली गई।

इधर घरमें एला देखती है कि जो माका मन रखकर चलनेका कौशल जानते हैं, उनके षड्यन्त्रसे निरपराधीपर ही निष्ठुर अन्याय हुआ करता है। एलासे सहा नहीं जाता, उत्तेजित होकर वह न्यायकारिणीके सामने सत्य प्रमाण रखती है। परन्तु कर्तव्यके अहंकारके सामने अकाट्य युक्ति ही दुःसह स्पर्द्धा है। अनुकूल तूफानी हवाकी तरह वह न्यायकी नावको आगे नहीं बढ़ाती, बल्कि उसे डुबानेके उन्मुख कर देती है।

इस परिवारमें और भी एक बला थी, जो एलाके मनको हमेशा चोट पहुँचाया करती। वह है उसकी माकी छूतकी सनक। एक दिन किसी मुसलमान अभ्यागतके बैठनेके लिए एलाने चटाई बिछा दी थी,—उस चटाईको माने फेंक दिया; ऊनी गलीचा बिछा देती तो कोई बात न थी। एलाका तार्किक मन बिना तर्क किये मानता नहीं। एक दिन उसने पितासे पूछा—"अच्छा, यह सब छुआछूत और नहाने-धोनेकी सनक स्त्रियोंपर ही क्यों इतनी हावी होती है? इसमें हृदयका तो स्थान ही नहीं, बल्कि विरोध है,—यह तो सिर्फ मशीनकी तरह अन्धा होकर चलना है।"

मनोविज्ञानके विशेषज्ञ पिताने कहा—"स्त्रियोंके मनमें हजारों वर्षोंसे हथकड़ियाँ पड़ी हुई हैं; वे तो मानती ही जायँगी, प्रश्न नहीं करेंगी,—इसी बातपर उन्हें समाज-मालिकोंसे इनाम मिले हैं; इसीसे मानकर चलना जितना ज्यादा अन्धा होता है, उसकी कीमत उनके लिए उतनी ही बढ़ जाती है। जनाने मरदोंकी भी यही दशा है।" आचारकी निरर्थकताके बारेमें बार-बार मासे प्रश्न किये बिना एलासे रहा नहीं गया। उत्तरमें उसे बार-बार फटकार ही मिली है। लगातार ऐसी चोटोंसे एलाका मन अबाध्यताकी ओर झुक गया है।

नरेशने देखा कि इन सब पारिवारिक द्वन्द्वोंसे लड़कीका स्वास्थ्य बिगड़ रहा है, इससे उन्हें गहरी चोट पहुँची। इतनेमें एक दिन एलाने, किसी विशेष अन्यायसे कठोर रूपसे आहत होकर, पिताके पास आकर कहा—"बाबूजी, मुझे कलकत्तेके किसी बोर्डिंगमें भेज दो।"

यह प्रस्ताव दोनोंके लिए दुःखदायक था, परन्तु पिताने

अवस्था समझ ली और मायामयीकी ओरसे प्रतिकूल झंझाघात होते हुए भी एलाको दूर भेज दिया ; और फिर अपनी निष्करुण गृहस्थी और अध्ययन-अध्यापनमें निमग्न हो गये ।

माने कहा—"शहरमें भेजकर लड़कीको मेमसाहब बनाना चाहते हो तो बना डालो ; पर तुम्हारी लाड़ली लड़की जब ससुराल जायगी, तब उसकी जानपर आ पड़ेगी । तब फिर मुझे दोष मत देना ।" लड़कीके व्यवहारमें कलिकालोचित स्वाधीनताके कुलक्षण देखकर उसकी माने ऐसी आशंका बार-बार प्रकट की है । एला अपनी भावी सासुके हाड़ जलायेगी, इस सम्भावनाको निश्चित जानकर उस काल्पनिक समधिनके प्रति उनकी अनुकम्पा मुखरित हो उठती थी । इसीसे एलाके मनमें यह धारणा दृढ़ हो चली थी कि ब्याहके लिए लड़कियोंको तैयार होना पड़ता है अपने आत्म-सम्मानको पंगु बनाकर, इसके लिए उन्हें न्याय-अन्यायके ज्ञानको भी मिटा देना पड़ता है ।

एलाने जब मैट्रिक पार होकर कालेजमें प्रवेश किया, तब उसकी माकी मृत्यु हो गई । नरेशने बीच-बीचमें विवाहके प्रस्तावपर लड़कीको राजी करनेकी काफी कोशिश की थी, पर वे उसे राजी न कर सके । एला अपूर्व सुन्दरी है, पात्रोंकी तरफसे प्रार्थनाओंकी कमी न थी, किन्तु विवाहके प्रति विमुखता उसके संस्कारोंमें समा गई थी । लड़कीने परीक्षाएँ पास कर लीं, किन्तु पिता उसे अविवाहित छोड़कर ही मर गये ।

सुरेश था उनका छोटा भाई । नरेशने अपने इस भाईको पाल-पोसकर बड़ा किया था, और अन्त तक अपने खर्चसे पढ़ाया भी । दो वर्षके लिए उसे विलायत भेजकर

उन्हें स्त्रीसे लांछित होना पड़ा और महाजनका कर्जदार भी बनना पड़ा। सुरेश इस समय डाक-विभागमें ऊँचे पदपर काम करता है। अपने कामके लिए उसे नाना प्रदेशोंमें घूमना पड़ता है। अब उसीपर एलाका भार आ पड़ा। यह भार उसने हृदयसे ही अंगीकार किया।

सुरेशकी स्त्रीका नाम है माधवी। वह जिस परिवारकी लड़की है, उस परिवारमें लड़कियोंको परिमित पढ़ाना-लिखाना ही प्रचलित है; उसका परिमाण बीचके मापसे कम ही है, ज्यादा नहीं। विलायतसे लौटनेके बाद पति जब ऊँचे पदपर नियुक्त हुए, तो उन्हें दूर-दूर घूमने-फिरनेका काम पड़ने लगा, और तब उनके लिए बाहरके अनेक लोगोंके साथ सामाजिकता निभाना अनिवार्य हो उठा। कुछ दिनोंके अभ्यासके बाद माधवी निमन्त्रण-आमन्त्रणोंमें विजातीय लौकिकता पालन करनेमें अभ्यस्त हो गई। यहाँ तक कि गोरोंके क्लबमें भी वह अपनी पंगु अंगरेज़ी भाषाको, सकारण और अकारण हंसीके द्वारा पूरा करके, काम चला लिया करती थी।

इतनेमें, सुरेश जब किसी प्रान्तके बड़े शहरमें रह रहे थे, एला उनके घर रहने लगी। उसके रूप गुण और विद्याने चाचाके मनमें गर्वका संचार कर दिया। वे अपने ऊपरवालों, सहकर्मियों तथा देशी और विलायती मिलनेवालोंके सामने एलाको प्रकट करनेके लिए व्यग्र हो उठे। एलाकी स्त्री-बुद्धि इस बातको ताड़ गई कि इसका फल अच्छा नहीं हो रहा। माधवी झूठे आरामका बहाना करके क्षण-क्षणमें कहने लगी—"मेरी तो जान बची—विलायती कायदेकी सामाजिकताका बोझ मुझपर क्यों लादना झूठमूठको! न तो मुझमें उतनी

विद्या है और न बुद्धि।" रंग-ढंग देखकर एलाने अपने चारों तरफ एक जनानखाना-सा खड़ा कर डाला। सुरेशकी लड़की सुरमाको पढ़ानेका भार उसने अतिरिक्त उत्साहके साथ अपने ऊपर ले लिया। और बाकीका समय उसने लगा दिया एक थीसिस लिखनेमें। उसका विषय था—बँगला मंगलकाव्य और चासरके काव्यकी तुलना। इस विषयको लेकर सुरेश भी बहुत उत्साहित हुए। इस समाचारका उन्होंने चारों ओर प्रचार करना शुरू कर दिया। माधवीने मुँह बनाकर कहा—"अति अच्छी नहीं होती।"

पतिसे कहा—"चटसे लड़कीको एलासे पढ़वाना शुरू कर दिया! क्यों, अधर मास्टरने क्या कसूर किया था? कुछ भी कहो तुम, पर मैं—"

सुरेश दंग रह गये, बोले—"क्या कहती हो तुम! एलाके साथ अधरकी तुलना! हुँ:।"

"दो-चार नोट्सकी किताबें रटकर पास कर लेनेसे ही विद्या नहीं आ जाती!"—कहकर गरदन टेढ़ी करके माधवी कमरेसे बाहर चली गई।

एक बात वह पतिसे कहना चाहती है; पर बात ओठों तक आकर रुक जाती है—'सुरमाकी उमर तेरह पार हो चली, आज नहीं तो कल लड़का ढूँढ़नेके लिए देश-भरमें दौड़-धूप करनी पड़ेगी, तब एला सुरमाके पास रहेगी तो…। आजकलके लड़कोंकी आँखोंमें जैसा फीके रंगका नशा रहता है, वे क्या जानें कि सुन्दरता किसे कहते हैं?' गहरी साँसें भरती और सोचती—ये सब बातें उनसे कहना ही फिजूल है, घर-गृहस्थीके मामलोंमें पुरुष अन्धे ही होते हैं।

माधवी इस कोशिशमें लग गई कि जितनी जल्दी हो सके, एलाका ब्याह हो जाय। ज्यादा कोशिश भी नहीं करनी पड़ी, अच्छे-अच्छे लड़के आप ही आ-आकर जुटने लगे—ऐसे लड़के कि सुरमाके साथ सगाई करनेको माधवीका मन ललचाने लगा। और एला उन्हें बार-बार निराश करके लौटा देती।

भतीजीकी इस जिद्-भरी नासमझीसे सुरेश उद्विग्न हो उठे, और चाचीको भी अत्यन्त असह्य हो उठा। वे जानती हैं कि समर्थ उमरकी लड़कीके लिए अच्छे वरकी उपेक्षा करना अपराध है। वयसोचित नाना प्रकारकी दुर्घटनाओंकी आशंका करने लगीं, और अपनी जिम्मेवारीको समझकर उनका हृदय व्यथित होने लगा। एला साफ समझ गई कि अब वह अपने चाचाके स्नेहके साथ उनकी गृहस्थीका द्वन्द्व कराने बैठी है।

ठीक इसी समय इन्द्रनाथ आ पहुँचे उस शहरमें। देशका विद्यार्थी-समाज उन्हें राज-चक्रवर्तीके समान मानता था। उनमें असाधारण तेज था, और विद्याकी ख्याति भी बहुत जबरदस्त थी। एक दिन सुरेशके घर उनका निमन्त्रण हुआ। उस दिन किसी एक मौकेसे एलाने, परिचय न होनेपर भी, बिना किसी संकोचके उनके पास आकर कहा—"मुझे आप अपना कोई काम नहीं दे सकते?"

आजकलके दिनोंमें इस तरहका आवेदन कोई विशेष आश्चर्यकी बात नहीं, परन्तु फिर भी इस लड़कीकी दीप्ति देखकर इन्द्रनाथ चौंक पड़े। उन्होंने कहा—"कलकत्तेमें अभी हाल ही में लड़कियोंके लिए 'नारायणी हाई स्कूल' खोला गया है। तुम्हें उसका संचालन-भार दे सकता हूँ, तैयार हो?"

"तैयार हूँ, अगर आप विश्वास करें।"

इन्द्रनाथने एलाके चेहरेपर अपनी उज्ज्वल दृष्टि रखते हुए कहा—"मैं आदमी पहचानता हूँ। तुमपर विश्वास करनेमें मुझे एक क्षणकी भी देर नहीं लगी। तुम्हें देखते ही समझ गया, तुम नवयुगकी दूती हो—नवयुगका आह्वान है तुममें।"

सहसा इन्द्रनाथके मुँहसे ऐसी बात सुनकर एलाके हृदयमें कम्पन-सा आ गया।

उसने कहा—"आपकी बातोंसे मुझे डर लगता है। गलतीसे मुझे ऊँचा न चढ़ाइये। आपकी धारणाके योग्य बननेके लिए दुःसाध्य चेष्टा करूँगी, तो मैं टूट जाऊँगी। अपनी शक्तिकी सीमाके भीतर जहाँ तक हो सकेगा, आपके आदर्शकी रक्षा करती रहूँगी, मगर अपनेको वैसा समझ न सकूँगी।"

इन्द्रनाथने कहा—"गृहस्थीके बन्धनमें कभी न बँधोगी, यह प्रतिज्ञा तुम्हें करनी पड़ेगी। तुम समाजकी नहीं हो, तुम देशकी हो।"

एलाने सिर उठाकर कहा—"यही प्रतिज्ञा है मेरी।"

चाचाने गमनोद्यत एलासे कहा—"तुझसे अब कभी ब्याहके लिए न कहूँगा। तू मेरे ही पास रह। यहींपर, मुहल्लेकी लड़कियोंका भार लेकर एक छोटा-मोटा क्लास खोलनेमें हर्ज क्या है?"

चाचीने स्नेहार्द्र पतिकी इस नासमझीसे नाखुश होकर कहा—"अब वह बड़ी हो चुकी, अपनी जिम्मेदारी अपने ही ऊपर लेना चाहती है, यह तो अच्छी ही बात है। तुम बीचमें पड़कर रुकावट क्यों डालते हो? तुम मनमें चाहे जो कुछ समझो, पर मैं पहलेसे कहे देती हूँ, उसकी फिकर मैं नहीं रख सकती।"

एलाने खूब दृढ़ताके साथ कहा—"मुझे काम मिल गया है, मैं काम करने ही जाऊँगी।"

एला काम करने ही चली गई।

इस भूमिकाके बाद पाँच वर्ष बीत गये, अब कहानी बहुत दूर पहुँच चुकी है।

पहला अध्याय

दृश्य—चायकी दूकान। उसके पास ही एक छोटा-सा घर है। उस घरमें बिक्रीके लिए कुछ स्कूल-कालेजकी पाठ्य-पुस्तकें सजी हुई हैं, अधिकांश सेकेण्डहैण्ड। कुछ हैं यूरोपीय आधुनिक कहानी-नाटकोंके अंगरेजी अनुवाद। उन्हें गरीब-घरके लड़के पन्ने उलट-पुलटकर चले जाते हैं। दूकानदार कुछ आपत्ति नहीं करता। दूकानके मालिक हैं कन्हाईलाल गुप्त, पुलिसके पेन्शनयाफ्ता पुराने सब-इन्स्पेक्टर।

सामने बड़ी सड़क है, बाईं बगलसे एक छोटी-सी गली चली गई है। जो एकान्तमें बैठकर चाय पीना चाहते हैं, उनके लिए उसी कमरेमें एक तरफ फटे-पुराने टाटका पर्दा लगाकर अलग व्यवस्था कर दी गई है। आज उसी तरफ किसी विशेष आयोजनके लक्षण दिखाई दे रहे हैं। स्टूल-चौकियोंकी कमी दूर करनेके लिए दार्जिलिंग-टी-कम्पनीके मार्केदार बक्स डाल दिये गये हैं। चायके पात्रोंमें भी अनिवार्य असमानता है; उनमें से कुछ तो नीले रंगके एनामेलके हैं और कुछ सफेद चीनी-मिट्टीके। टेबिलपर हैण्डिल टूटे दूधके जगमें फूलोंका गुलदस्ता है। दिनके करीब तीन बजे होंगे। लड़कोंने एलालताको निमन्त्रणका समय दिया था ठीक ढाई बजे। कहा था, एक मिनट भी पिछड़ जाओगी तो काम न चलेगा। असमयमें निमन्त्रण दिया गया था, क्योंकि उसी समय दूकान सूनी रहती है। चाय-पिपासुओंकी भीड़ लगती है साढ़े-चार

बजेके बाद। एला ठीक समयपर ही उपस्थित हुई थी। पर लड़कोंमें से एकका भी पता नहीं। इसीसे अकेली बैठी सोच रही थी—तो क्या तारीख सुननेमें गलती हो गई! इतनेमें इन्द्रनाथको घुसते देख वह चौंक पड़ी। इस जगह उनके आनेकी आशा किसी भी तरह नहीं की जा सकती।

इन्द्रनाथने यूरोपमें बहुत दिन बिताये हैं, और सायन्समें उन्होंने काफी ख्याति भी प्राप्ति की है। काफी ऊँचे पदपर पहुँचनेका उन्हें अधिकार था, क्योंकि यूरोपीय अध्यापकोंके प्रशंसापत्र थे उदार भाषामें। यूरोपमें रहते हुए किसी एक बदनाम भारतीय राजनीतिकके साथ कदाचित् उनकी भेंट-मुलाकात हो गई थी, इसीसे देशमें आते ही उनके सभी कामोंमें बाधा पहुँचने लगी। अन्तमें इंग्लैण्डके किसी ख्यातनामा विज्ञानाचार्यकी विशेष सिफारिशसे उन्हें अध्यापकीका काम मिला भी, तो वह अयोग्य अधिकारीके अधीन। अयोग्यताके साथ ईर्ष्या होती है प्रखर, इसीसे उनकी वैज्ञानिक गवेषणाकी चेष्टा अधिकारियों द्वारा पद-पदपर बाधा पाने लगी। अन्तमें उन्हें ऐसी जगह स्थानान्तरित होना पड़ा, जहाँ लैबोरेटरी तक नहीं। उन्होंने समझ लिया कि इस देशमें उनके लिए जीवनके सर्वोच्च अध्यवसायका मार्ग बन्द है। औरोंकी तरह एक ही प्रदक्षिणा-मार्गसे अध्यापनाका चिराभ्यस्त पहिया घुमाते हुए अन्तमें थोड़ीसी पेन्शनके सहारे जीवन समाप्त करें, अपनी इस दुर्गतिकी आशंकाको वे किसी भी तरह स्वीकार न कर सके। वे निश्चित जानते थे कि दूसरे किसी भी देशमें सम्मान प्राप्त करनेकी शक्ति उनमें काफी थी।

एक दिन इन्द्रनाथने जर्मन और फरासीसी भाषा सिखानेका एक प्राइवेट क्लास खोल दिया, और साथ ही भार लिया उद्भिज्ज-शास्त्र और भूतत्त्वमें कालेजके छात्रोंको सहायता पहुँचानेका। क्रमशः इस छोटेसे अनुष्ठानकी गुप्त सुरंगसे एक अप्रकाश्य साधनाकी जटिल जड़ें जेलखानोंके आँगनोंमें होकर बहुत दूर तक फैल गईं।

इन्द्रनाथने पूछा—"एला, तुम यहाँ?"

एलाने कहा—"आपने मेरे घर जानेकी उन लोगोंसे मनाही कर दी है, इसलिए लड़कोंने मुझे यहीं बुलाया है।"

"इसकी खबर मुझे पहले ही से मिल गई थी। खबर मिलते ही मैंने उन लोगोंको अन्यत्र जरूरी कामसे लगा दिया। उन सबकी तरफसे मैं ऐपोलौजी (माफी) माँगने आया हूँ। बिल भी चुका दूँगा।"

"क्यों आपने मेरा निमन्त्रण बिगाड़ दिया?"

"लड़कोंके साथ तुम्हारा सहृदयताका सम्बन्ध है, इस बातको दबा देनेके लिए। कल देख लेना,—तुम्हारे नामसे एक निबन्ध अखबारमें भेज दिया है।"

"आपने लिखा है? आपकी कलमसे निकली चीज फर्जी नामसे नहीं चल सकती; लोग उसे अकृत्रिम समझके विश्वास नहीं करेंगे।"

"बायें हाथसे कच्ची लिखावट लिखी है; बुद्धिका परिचय भी नहीं है, सदुपदेश है।"

"कैसा?"

"तुम लिख रही हो,—लड़के अकाल जागरणसे देशको मारे डाल रहे हैं। नारी-समाजसे तुम्हारी सकरुण अपील है

कि वे इन अभागोंका दिमाग ठंडा करें। लिखा है,—दूरसे तिरस्कार करनेसे तुम्हारी आवाज उनके कानों तक न पहुँचेगी। उनके बीचमें जा पड़ना होगा, जहाँ उनके नशेका अड्डा है। शासनकर्ताओंको सन्देह हो सकता है, सो होने दो। कह रही हो,—तुम माकी जाति हो; उनका दंड स्वयं अंगीकार करके भी यदि तुम उनकी रक्षा कर सकीं, तो वह मरण भी सार्थक होगा। आजकल सर्वदा ही हम कहा करतीं हैं कि हम मातृजाति हैं,—ये सब बातें आँसुओंसे भिगोकर लेखमें भर दी हैं। मातृ-वत्सल पाठकोंकी आँखोंमें आँसू आ जायेंगे। अगर तुम पुरुष होतीं, तो इसके बाद फिर तुम्हारे लिए रायबहादुरकी पदवी मिलना असम्भव न रह जाता।"

"आपने जो-कुछ लिखा है, वह कतई मेरी बात हो ही नहीं सकती, ऐसा तो मैं नहीं कहूँगी। इन सत्यानाशी लड़कोंसे मेरा प्रेम है,—ऐसे लड़के हैं कहाँ? एक दिन उनके साथ मैं कालेजमें पढ़ी हूँ। पहले-पहल वे मेरे नामसे बोर्डपर अंट-संट बातें लिखा करते थे,—पीछेसे 'छोटी इलायची' कहकर चिल्लाते और तुरन्त ही भलेमानसोंकी तरह आसमानकी ओर देखने लगते थे। फोर्थ-ईयरमें मेरी एक सहेली पढ़ती थी इन्द्राणी—उसे कहा करते थे 'बड़ी इलायची'। वह बेचारी देखनेमें कुछ लम्बी थी, रंग भी साफ न था। इन सब छोटे-मोटे उपद्रवोंसे बहुत-सी लड़कियाँ नाराज हो जाया करती थीं, मगर मैं लड़कोंका ही पक्ष लिया करती थी। मैं जानती थी कि हम उनकी आँखोंके लिए अनभ्यस्त हैं, इसीसे उनका व्यवहार बेसलीकेका होता है—कभी-कभी भद्दा भी हो जाता है, परन्तु वह स्वाभाविक नहीं है। जब अभ्यास हो गया

तो स्वर अपने-आप ही सहज-स्वाभाविक हो गया। छोटी इलायची हो गई एला जीजी। बीच-बीचमें कभी किसीके स्वरमें मधुर रस भी आया है,—और आयेगा क्यों नहीं? पर मैं कभी उससे डरी नहीं। मैंने अपने अनुभवसे देखा है कि लड़कोंके साथ सलूक करना बहुत ही सहज है, अगर लड़कियाँ ज्ञात या अज्ञात-रूपसे उनके साथ आखेटका खेल खेलनेकी कोशिश न करें। उसके बाद एक-एक करके देखा कि उनमें जो सबसे अच्छे थे, जिनमें नीचता नहीं थी, जिनमें स्त्रियोंके प्रति पुरुषोचित सम्मान—"

"अर्थात् कलकत्तेके रसिक लड़कोंकी तरह जिनमें रस गाँजने नहीं लगा था—"

"हाँ, वे ही, दौड़ने लगे मृत्यु-दूतके पीछे-पीछे हथेलीपर जान रखे, उनमें से लगभग सभी मेरी ही तरह गँवार थे। वे ही अगर मरनेको दौड़ें, तो मैं नहीं चाहती घरके कोनेमें जिन्दा रहना। ज्यों-ज्यों दिन बीतते जाते हैं, हमारा उद्देश्य उद्देश्य न होकर नशा होता जा रहा है। हमारे काम करनेकी पद्धति मानो अपनी बेताल धुनसे चली जा रही है विचारशक्तिके बाहर। अच्छा नहीं लगता। ऐसे-ऐसे लड़कोंकी किस अन्धशक्तिके सामने बलि दी जा रही है! मेरी तो छाती फटती है।"

"वत्से, यह जो धिक्कार है, यही तो कुरुक्षेत्रकी उपक्रमणिका है। अर्जुनके मनमें भी क्षोभ उत्पन्न हुआ था। मैं डाक्टरी सीखते समय शुरू-शुरूमें मुरदे चीरते-चीरते मारे घृणाके मूर्छित हो जाया करता था। वह घृणा ही घृणाके योग्य है। शक्तिके प्रारम्भमें निष्ठुरकी साधन है, अन्तमें शायद क्षमा हो। तुम

लोग कहा करती हो—स्त्रियाँ माकी जाति हैं, यह कोई गौरवकी बात नहीं। मा तो प्रकृतिके हाथसे स्वतः ही बनी हुई हैं। जन्तु-जानवर भी उससे नहीं बच पाये। उससे भी बड़ी बात यह है कि तुम शक्तिरूपिणी हो, इसी बातको प्रमाणित करना होगा—दया-मायाके दलदलको पार करके कड़ी जमीनपर। शक्ति दो, पुरुषोंको शक्ति दो।"

"ये सब बड़ी-बड़ी बातें कहकर आप बहका रहे हैं हम लोगोंको। हम जो असलमें हैं, उससे बहुत ज्यादा आप दावा करते हैं। इतना सहन न होगा।"

"दावेके जोरसे ही दावा सत्य होता है। तुम लोगोंको हम जैसा विश्वास करते रहेंगे, तुम वैसी ही होती रहोगी। तुम लोग भी उसी तरह हमपर विश्वास करो, जिससे हमारी साधना सत्य हो।"

"आपसे बातें कहलाना मुझे अच्छा लगता है, पर अभी नहीं। मैं खुद कुछ कहना चाहती हूँ।"

"अच्छा! तो यहाँ नहीं, चलो उस पीछेवाले कमरेमें।"

परदा-लगे अँधेरे-से कमरेमें दोनों चले गये। वहाँ एक पुरानी टेबिल थी और उसके दोनों तरफ दो बेन्चें; दीवारपर एक बड़े साइज़का भारतवर्षका मेप टँगा था।

"आपने एक अन्याय किया है—यह बात बिना कहे मुझसे रहा नहीं जाता।"

इन्द्रनाथको इस तरह कहना, सिर्फ एलाका ही काम है। फिर भी उसके लिए यह सहज नहीं था, इसीसे उसे अपने गलेपर अस्वाभाविक जोर देना पड़ा।

इन्द्रनाथके लिए सिर्फ इतना ही कहना कि वे देखनेमें अच्छे हैं, पूरा कहना नहीं होगा। उनके चेहरेपर एक कठिन आकर्षण-शक्ति है। मानो उनके सुदूर अन्त:करणमें एक वज्र बँधा है, जिसका गर्जन नहीं सुनाई देता, हाँ, उसकी निष्ठुर दीप्ति बीच-बीचमें तेजीसे निकली पड़ती है। चेहरेके भावमें मँजी-घसी भद्रता है, पैनाई हुई छुरीकी तरह। कड़ी बात कहनेमें कोई हिचक नहीं, पर हँसके बोलते हैं; गलेका स्वर गुस्सेमें भी ऊँचा नहीं चढ़ता, गुस्सा प्रकट होता है हँसीमें। जितनी सफाईसे मर्यादाकी रक्षा होती है, उतनी कभी भूलते नहीं और उसका अतिक्रम भी नहीं होता। सिरके बाल कम छँटे हुए हैं, पर सम्हाले बिना सिलसिला बिगड़नेका कोई डर नहीं। चेहरेका रंग है बादामी, ललाई लिये हुए। भौंहोंके ऊपर प्रशस्त तना हुआ ललाट है, दृष्टिमें कठिन बुद्धिकी तीक्ष्णता है, ओठोंपर अविचलित संकल्प और प्रभुत्वके गौरवकी झलक है। अत्यन्त दु:साध्य ढंगका दावा वे अनायास ही कर सकते हैं, जानते हैं कि वह दावा सहजमें खारिज नहीं हो सकता। कोई जानता है कि उनकी बुद्धि असाधारण है, और कोई समझता है कि उनकी शक्ति अलौकिक है। इसके सिवा किसीमें सीमाहीन श्रद्धा है तो किसीमें अकारण भय।

इन्द्रनाथने मुसकराते हुए कहा—"कौनसा अन्याय?"

"उमाको आपने ब्याह करनेकी आज्ञा दी है, पर वह तो ब्याह करना नहीं चाहती।"

"कौन कहता है, नहीं चाहती?"

"वह खुद ही कहती है।"

"हो सकता है कि वह खुद ठीक नहीं जानती हो, या ठीक बताती न हो।"

"उसने आपके सामने प्रतिज्ञा की थी ब्याह न करनेकी।"

"तब थी वह सत्य, अब सत्य नहीं रही। मुँहकी बातसे सत्यकी सृष्टि नहीं की जा सकती। प्रतिज्ञा तो उमा स्वयं ही तोड़ देती,—मैंने तुड़वा दी, उसका अपराध बचा दिया।"

"प्रतिज्ञा पूरी न करनेकी जिम्मेदारी उसीकी है, या तो वह उसे तोड़ती या अपराध करती।"

"तोड़ते-तोड़ते आस-पास बहुत ज्यादा तोड़-फोड़ देती, उसमें हम सभीका नुकसान होता।"

"मगर वह जो बहुत रो-धो रही है।"

"तो फिर रोने-धोनेके दिन और न बढ़ने दूँगा—कल परसोंके भीतर ही ब्याह कर-करा दिया जायगा।"

"कल-परसोंके बाद भी तो उसका सारा जीवन पड़ा हुआ है।"

"लड़कियोंका ब्याहसे पहलेका रोना 'प्रभाते मेघाडम्बरम्' है।"

"आप बड़े निष्ठुर हैं।"

"क्योंकि मनुष्यपर जिस विधाताका प्रेम है, वह स्वयं निष्ठुर है, जानवरको ही वह प्रश्रय देता है।"

"आप जानते हैं, उमा सुकुमारसे प्रेम करती है।"

"इसीसे उसे अलग करना चाहता हूँ।"

"प्रेमकी सजा?"

"प्रेमकी सजाके कुछ मानी नहीं होते। ऐसे तो चेचक होना भी एक सजा है,—मगर गोटी निकल आनेपर उसे घरसे निकालकर अस्पताल भेज देना ही ठीक है।"

"सुकुमारके साथ ब्याह हो जाय तो ठीक है।"

"मगर सुकुमारने तो कोई क़सूर नहीं किया। वैसे लड़के और हैं कितने?"

"वह अगर स्वयं ही उमासे ब्याह करनेको राजी हो जाय?"

"असम्भव नहीं। इसीसे तो इतनी जल्दी पड़ी है। उस सरीखे उच्च श्रेणीके पुरुषके मनमें विभ्रम ला देना लड़कियोंके लिए बहुत आसान है;—सुकुमारके सामने दो बूँद आँसू टपकाकर सौजन्यको प्रश्रय साबित किया जा सकता है। सुनकर नाराज हो रही हो?"

"नाराज क्यों होने लगी? मेरे अनुभवमें ऐसी घटनाओंकी कमी नहीं कि स्त्रियोंकी निपुणताने बढ़ावा दिया है और उसका दायित्व उठाना पड़ा है पुरुषको। अब समय आ गया सत्यके अनुरोधसे न्याय-अन्याय विचार करनेका। मैं ऐसा किया करती हूँ, इसीसे तो लड़कियाँ मुझे देख नहीं सकतीं। जिसके साथ उमाके ब्याहका हुक्म हुआ है, उस भोगीलालका क्या मत है?"

"उस निष्कंटक भलेमानसके मतामतकी कोई बला ही नहीं। भारतकी लड़की-मात्रको वह विधाताकी अपूर्व सृष्टि समझता है। ऐसे मुग्ध-स्वभावी लड़केको दलसे अलग कर देना ही ठीक है। कूड़ा-करकट फेंकनेकी सबसे अच्छी डलिया है ब्याह।"

"इन सब उत्पातोंकी आशंका होते हुए भी आपने स्त्री-पुरुषोंको एकत्र क्यों किया ?"

"जिस संन्यासीने शरीरपर भस्म रमाई है और जिस भस्म-कुंडने प्रवृत्तियोंको भस्म कर दिया है, उन क्लीवोंसे काम नहीं होगा इसलिए। जब देखूंगा कि हमारे दलका कोई अग्नि-उपासक असावधानीसे अपने ही अन्दर आग लगाना चाहता है—चटसे हटा दूँगा उसे। हमारी आग देश-भरमें व्याप्त है, बुझे-हुए दिलसे वह नहीं जल सकती, और उनके जरिये भी कुछ नहीं हो सकता जो आगको दबाना नहीं जानते।"

एला गम्भीर मुँह बनाये बैठी रही। कुछ देर बाद आँखें नीची करके बोली—"तो मुझे आप छोड़ दीजिये।"

"इतनी क्षति करनेको क्यों कहती हो ?"

"आप जानते नहीं।"

"कौन कहता है, नहीं जानता ? देखा है मैंने तुम्हारे खद्दरमें कुछ-कुछ रंग आने लगा है। जान लिया कि हृदयमें अरुणोदय हो गया। मैं समझ सकता हूँ कि किसी-एकके पैरोंकी आहटकी प्रत्याशामें तुम्हारे कान बिछे हुए हैं। पिछले शुक्रवारको जब मैं तुम्हारे घर गया था, तुमने सोचा था कि कोई और है। देखा कि मनको ठीक कर लेनेमें तुम्हें कुछ समय लगा। शरमाओ मत, एला, इसमें असंगत कोई बात नहीं।"

कान सुर्ख हो गये एलाके, चुपचाप बैठी रही।

इन्द्रनाथने कहा—"तुम किसीको प्यार करती हो, यही तो ? तुम्हारा मन तो जड़ पत्थरका बना नहीं है। जिसे प्यार

करती हो, उसे भी जानता हूँ। पाश्चात्तापका कारण तो इसमें कुछ भी नहीं देखता।"

"आपने कहा था कि एकाग्र-चित्तसे काम करना होगा। हरएक हालतमें वैसा नहीं भी हो सकता है।"

"सबके लिए नहीं। परन्तु प्रेमके भारी भारसे तुम अपना व्रत डुबो दोगी, ऐसी लड़की तुम नहीं हो।"

"मगर—"

"इसमें मगर कुछ भी नहीं—तुम किसी भी हालतमें छुटकारा नहीं पा सकतीं।"

"मैं तो आप लोगोंके किसी काममें नहीं आती, यह तो आप जानते ही हैं।"

"तुमसे मैं काम नहीं चाहता, कामकी सब बातें तुमसे कहता भी नहीं। तुम स्वयं कैसे समझ सकती हो कि तुम्हारे हाथका रक्तचन्दनका टीका लड़कोंके मनमें कैसी आग लगा देता है! उसे बाद देकर सिर्फ सूखी तनखाहपर काम करानेसे तुमसे पूरा काम नहीं मिल सकता। हम कामिनी-कांचनके त्यागी नहीं हैं। जहाँ कांचनका प्रभाव है वहाँ कांचनकी मैं अवज्ञा नहीं करता, जहाँ कामिनीका प्रभाव है वहाँ कामिनीको वेदीपर बिठाया है।"

"आपसे झूठ नहीं बोलूँगी, मैं समझ रही हूँ कि मेरा प्रेम दिनों-दिन मेरे अन्य सब प्रेमको पीछे छोड़े जा रहा है।"

"कोई डर नहीं, खूब प्रेम करो। केवल 'मा-मा'के स्वरमें जो देशको पुकारा करते हैं वे चिर-शिशु ही रहेंगे। देश बूढ़े-बच्चोंकी मा नहीं है, देश अर्द्ध-नारीश्वर है—

स्त्री-पुरुषके मिलनमें उसकी उपलब्धि है। इस मिलनको घर-गृहस्थीके पिंजड़ेमें बन्द करके निस्तेज मत करो।"

"लेकिन फिर आप उमाको—"

"उमा! कालू!—प्रेमके शुष्क रुद्ररूप हैं वे, वे इसे सह कैसे सकेंगे? जिस दाम्पत्यके घाटपर उनकी सम्पूर्ण साधनाका अन्त्येष्टि-संस्कार है, समय रहते वहीं दोनोंकी गंगायात्रा* कराये दे रहा हूँ।—जाने दो इस चर्चाको। सुननेमें आया है कि तुम्हारे घरमें डकैत घुसा था परसों रातको।"

"हाँ, घुसा तो था।"

"अपनी जुजुत्सु-शिक्षासे कुछ फायदा उठाया तुमने?"

"मेरा तो विश्वास है कि डकैतकी कलाई तोड़ दी है।"

"मनके भीतर अहा-उहू कुछ नहीं हुआ?"

"होता, पर डर था, कहीं वह मेरा अपमान न कर बैठे। वह अगर यन्त्रणासे हार मान लेता, तो मैं आखिर तक मरोड़ न दे सकती।"

"पहचान सकी थीं वह कौन था?"

"अँधेरेमें दिखाई नहीं दिया।"

"अगर दिखाई देता तो पहचान लेतीं, वह अनादि था।"

"अरे-रे, यह क्या बात! अपना अनादि! वह तो लड़का ही है अभी!"

"मैंने ही उसे भेजा था।"

"आप ही ने! क्यों ऐसा काम किया?"

---

* मरणासन्न वृद्ध व्यक्तिको पहलेसे ही गंगाके तटपर ले जानेका नाम गंगायात्रा है।

"तुम्हारी भी परीक्षा हो गई, और उसकी भी।"

"कैसे निष्ठुर हैं आप!"

"मैं था नीचेके कमरेमें, उसी वक्त हड्डी ठीक कर दी। तुम अपनेको समझती हो व्यथा-कातर। मैंने समझाना चाहा था कि विपत्तिके सामने कातरता स्वाभाविक नहीं होती। उस दिन तुमसे कहा था बकरीके बच्चेको पिस्तौलसे मारनेके लिए। तुमने कहा कि तुमसे हो ही नहीं सकता। तुम्हारी फुफेरी बहनने बहादुरीके साथ मार दी गोली। जब देखा कि जानवर धप-से गिर पड़ा, तो कठोरताका आभास दिखानेके लिए ठहाका मारकर हँस पड़ी. हिस्टीरियाकी हँसी थी वह, उस दिन रातको उसे नींद नहीं आई। मगर तुम्हें यदि शेर भी खाने आता और तुम डरपोक न होतीं, तो उसी वक्त उसे मार देतीं, दुविधा न करतीं। हम उस शेरको मनके सामने स्पष्ट देखा करते हैं, दया-मायाको तिलांजलि दे दी है, नहीं तो अपनेको सेन्टिमेन्टल (भावुक) समझकर घृणा करता। श्रीकृष्णने अर्जुनको यही बात समझाई थी। निर्दय मत होना, पर कर्तव्यके समय निर्मम जरूर होना। समझ गई?"

"समझ गई।"

"अगर समझ गई हो, तो एक प्रश्न करूँगा। तुम अतीनको प्यार करती हो?"

कोई जवाब न देकर एला चुप बनी रही।

"अगर कभी वह हम सबको विपत्तिमें डाल दे, तो अपने हाथसे तुम उसे मार नहीं सकतीं?"

"उनके लिए यह बात इतनी असम्भव है कि 'हाँ' कहनेमें भी मुझे हिचक नहीं।"

"मान लो, अगर सम्भव हो ?"

"मुँहसे चाहे कुछ भी क्यों न कहूँ, अपनेको क्या मैं अन्त तक पहचानती हूँ ?"

"पहचानना ही होगा अपनेको। सारी भीषण सम्भावनाओंकी रोज कल्पना करके अपनेको तैयार रखना होगा।"

"मैं निश्चितरूपसे कहती हूँ, आपने मुझे गलतीसे चुना है।"

"मैं निश्चित जानता हूँ, मैंने गलती नहीं की।"

"मास्टर साहब, आपके पैरों पड़ती हूँ, अतीनको मुक्ति दीजिये।"

"मैं मुक्ति देनेवाला कौन हूँ ? वह अपने ही संकल्पके बन्धनमें खुद बँधा है। उसके मनसे दुविधा कभी भी नहीं मिट सकती; रुचिपर चोट पहुँचा करेगी हर घड़ी, तो भी उसका आत्म-सम्मान उसे ले जायगा अन्त तक।"

"आदमी पहचाननेमें क्या आप कभी गलती नहीं करते।"

"करता हूँ। बहुतसे आदमी ऐसे हैं, जिनके स्वभावमें दो तरहकी बुनावटका काम है। दोनोंमें कोई मेल नहीं। फिर भी दोनों ही सत्य हैं। वे खुद अपने तईं भी गलती करते हैं।"

भारी गलेकी आवाज आई—"कहो जी, भाई साहब !"

"कन्हाई हो क्या ? आओ-आओ।"

कन्हाई गुप्त कमरेके भीतर दाखिल हुआ। ठिगना मोटा आदमी है अधबूढ़ा। दाढ़ी-मूँछ बनानेकी फुरसत नहीं मिली, सारा चेहरा कँटीला हो उठा है। माथेके सामनेके बाल उड़

गये हैं ; धोतीके ऊपर मोटी खादीकी चद्दर है, धोबीकी कृपा-दृष्टिसे वंचित ; कुरता है ही नहीं। हाथ दोनों शरीरके मापके हिसाबसे छोटे लगते हैं, मालूम होता है—हमेशा वे काम करनेको तैयार हैं। दलके लोगोंका यथासम्भव पेट भरनेके लिए ही कन्हाईकी यह चायकी दूकान है।

कन्हाईने अपने स्वभाविक दबे और बैठे हुए गलेसे कहा—"भाई साहब, तुम्हारी ख्याति है वाक्संयमके लिए, तुम्हें मुनि कहा जाय तो बेजा नहीं। एला-जीजी शायद तुम्हारी उस ख्यातिको मिट्टीमें मिला देंगी।"

इन्द्रनाथने हंसते हुए कहा—"बात न करनेकी ही साधना है हम लोगोंकी। नियमकी रक्षा करनेके लिए ही व्यतिक्रमकी जरूरत है। यह लड़की खुद बात नहीं करती, दूसरोंको बात कहनेका मौका देती है,—वाक्यके लिए यह एक बहुमूल्य आतिथ्य है।"

"क्या कहते हो तुम भी ! एला-जीजी बात नहीं करतीं ! तुम्हारे सामने चुप हैं, पर जहाँ मुँह खोलती हैं, वहाँ वाणीकी बाढ़ ही आई समझो। मैं तो पक्के माथेका आदमी हूं, फिर भी भनक कानमें पड़ते ही खाता-बही छोड़कर ओटसे उसकी बातें सुनने चला आता हूँ। अब मेरी भी तरफ जरा ध्यान दो। एला-जीजी सरीखा तो मेरा कंठ नहीं है, पर संक्षेपमें जो कुछ कहूँगा, वह मर्म तक पहुँच जायगा।"

एला झट उठ खड़ी हुई। इन्द्रनाथने कहा—"जानेसे पहले एक बात तुम्हें जता दूं। दलके लोगोंके सामने मैं तुम्हारी निन्दा किया करता हूं। यहाँ तक कि ऐसी बात भी मैंने कही है कि किसी दिन तुम्हें शायद एकदम निश्चिह्न हटा

देना पड़े। कहा है, अतीनको तुम फोड़े ले रही हो, जिससे और भी कुछ फूट सकता है।"

"कहते-कहते बातको सच क्यों किये डाल रहे हैं? क्या मालूम, यहाँके साथ शायद मेरा कुछ असामंजस्य हो।"

"होनेपर भी मैं तुम्हें सन्देह नहीं करता; परन्तु फिर भी उनके सामने तुम्हारी निन्दा करता हूं। तुम्हारा शत्रु कोई नहीं है, ऐसी प्रसिद्धि है, मगर देखता हूं कि तुम्हारे अनुरक्तोंमें से बारह-आने देशी मन उस निन्दाको विश्वास करनेके लिए आग्रहके साथ लालायित हो उठते हैं। ये निन्दा-विलासी लोग निष्ठाहीन हैं। ऐसोंके नाम खातेमें नोट कर लेता हूं। बहुतसे पन्ने भर गये हैं।"

"मास्टर साहब, उन्हें निन्दासे प्रेम है, इसीसे वे निन्दा करते हैं, मुझपर गुस्सा होनेकी वजहसे नहीं।"

"अजातशत्रु नाम सुना है, एला? ये सभी जातशत्रु हैं। जन्मकालसे ही इनकी यह अहैतुक शत्रुता देशके अभ्युत्थानकी सारी चेष्टाओंको बराबर धूलमें मिलाती आ रही है।"

"भाई साहब, आज यहीं तक—विषयको आगामी अंकमें समाप्य रहने दो। एला-जीजी, तुम्हारे चायके निमन्त्रण तोड़नेकी जड़में गुप्तरूपसे मेरा भी हाथ हो, तो कुछ खयाल मत करना। मेरी चायकी दूकानपर ताला पड़नेका समय आ पहुँचा। शायद सौ-दो-सौ कोस दूर जाकर अबकी नाईकी दूकान खोलनी पड़ेगी। इस बीचमें अलकानन्द तेलके पाँच पीपे तैयार करा लिये हैं। महादेवकी जटा निचोड़कर निकाला गया है। एक सर्टिफिकेट दे देना, वत्से, लिखना—तेल लगानेके बादसे जूड़ा बाँधना एक आफत-सी हो गई है, लम्बी

वेणीको सम्हालकर उठाना स्वयं दशभुजा देवीके भी बूतेके बाहर है।"

जाते वक्त एला दरवाजेके पास आकर पीछेको मुँह करके बोली—"मास्टर साहब, याद रही आपकी बात, तैयार रहूंगी। मुझे हटानेका दिन भी शायद आयेगा, चुपकेसे बिला जाऊंगी।"

एलाके चले जानेपर इन्द्रनाथने कहा—"तुम्हें चंचल क्यों देख रहा हूं, कन्हाई?"

"फिलहाल सड़कके किनारे मेरी उस सामनेकी टेबिलपर ही तीन-चारेक गुंडे लड़के वीररसका प्रचार कर रहे थे। आवाजसे मालूम होता था जॉन-बुलके ही दत्तक-बछड़े हैं। मैंने सिडिशनके नमूने बताकर उनके नामसे थानेमें रिपोर्ट कर दी है।"

"समझनेमें गलती तो नहीं की, कन्हाई?"

"बल्कि गलतीसे सन्देह करना अच्छा, मगर सन्देह न करके गलती करना घातक है। खालिस बेवकूफ ही अगर हुए तो कोई उन्हें बचा नहीं सकता, और अगर असल दुश्मन हुए तो उन्हें मार ही कौन सकता है? मेरी रिपोर्टसे उन्नति ही होगी। उस दिन जोर-शोरसे वे सब शैतान शासन-प्रणालीके ऊपरसे रक्तगंगा बहानेका प्रस्ताव कर रहे थे। निश्चय ही अभयचरण रक्षित इनकी उपाधि है। एक दिन शामको कैश-बक्स लेकर हिसाब मिलाने बैठा था। अचानक एक फटे-पुराने मैले-कुचैले कपड़े पहने लड़का चला आया, चुपकेसे बोला—रुपये चाहिए पचीस, दिनाजपुर जाना है। अपने माथुर-मामाका नाम भी लिया। मैं तड़ाकसे उछलकर चिल्ला उठा—शैतान, इतनी बड़ी हिम्मत तुम्हारी! अभी पकड़वाये

देता हूँ पुलिस बुलाकर।—अपने पास समय बिलकुल न था, नहीं-तो प्रहसन खतम कर देता, ले जाता थानेमें। तुम्हारे लड़के लोग जो बगलके कमरेमें बैठे चाय पी रहे थे, वे मेरे ऊपर अग्निशर्मा हो उठे,—उसे देनेके लिए चन्दा उगाहना शुरू कर दिया, सबकी जेबें बटोरनेपर देखा गया कि तेरह आनेसे ज्यादा फंड न हो सका। लड़का मेरी मूर्ति देखकर चुपकेसे चम्पत हो गया।"

"तब तो देखता हूँ तुम्हारे ढक्कनके छेदसे गन्ध निकलने लगी है—मक्खियोंकी आमदनी शुरू हो गई।"

"इसमें शक नहीं। भाई साहब, अभी ही फैला दो अपने चेलोंको दूर-दूर—उनमें से एक भी बेकार न रहने पावे। Ostensible means of livelihood—जीविकाका प्रत्यक्ष साधन—हरएकके लिए होना ही चाहिए।"

"चाहिए तो जरूर ही। पर उपाय भी कुछ सोचा है?"

"बहुत दिनोंसे। हाथ खाली न था, खुद कुछ कर न सका। सोच रखा है, उपकरण भी इकट्ठे कर लिये हैं धीरे-धीरे। माधव कविराज बेचता है ज्वराशनि-बटिका, उसमें बारह-आने कुनैन है। वही लेकर लेबिल बदलके नाम रख दूँगा मैलेरियारि गोलियाँ, कुनैनके पीछे बहुत-सी झूठी बातें जोड़ देनी पड़ेंगी। प्रतुल सेनको लगा दिया जायगा कैन्विस-बैग हाथमें लिये उसके प्रचार करनेमें। तुम्हारा निवारण फर्स्ट क्लास एम० एस-सी० की लज्जा त्यागकर भैरवी-कवचके काममें लग जायगा,—उस कवचमें सप्तधातुके सिवा नवीन रसायनकी और-भी कई नई धातुओंके नाम जोड़कर प्राचीन ऋषिओं और आधुनिक विज्ञानका अभूतपूर्व सम्मिलन

साधन किया जा सकता है। जगबन्धु संस्कृत श्लोकोंपर व्याकरणका जादू चलाकर उच्चस्वरसे प्रमाणित करता रहेगा कि चाणक्य जनमे थे बंगदेशके नेत्रकोनामें, मेरा भी जन्मस्थान उसी सब-डिवीज़नमें है। इस विषयमें भयंकर रूपसे खंडन-मंडन चलने दो साहित्य-क्षेत्रमें, अन्तमें चाणक्य-जयन्ती की जायगी मेरे ही परदादेके खंडहर मकानमें। तुम्हारा कैम्बेली डाक्टर तारिणी संडेल शीतला माताके मन्दिरके लिए चन्दा वसूल करके मुहल्लेवालोंकी नींद हराम करता रहेगा। असल बात यह है कि तुम्हारे सबसे बढ़कर ऊँचे माथेवाले ग्रैनेडियर (योद्धा) लड़कोंको कुछ दिनोंके लिए फालतू रोजगारोंसे ढक देना होगा—कोई उन्हें बेवकूफ कहता रहे और कोई चतुर व्यवसायी।"

इन्द्रनाथने हँसकर कहा—"तुम्हारी बातें सुनकर मेरी भी इच्छा होती है कि किसी रोजगारमें लग जाऊँ। और किसी बातके लिए नहीं, सिर्फ दिवालिया होनेकी कार्य-प्रणाली और साइकॉलॉजीका अध्ययन करनेके लिए।"

कन्हाईने कहा—"तुम जिस रोजगारमें लगे हुए हो, भाई साहब, उसका आज न सही, कल सही, दिवाला तो निकालेगा ही। जो दिवालिये होते हैं वे न समझनेके कारण होते हों, सो बात नहीं ; असलमें वे नुकसानके रास्तेको किसी भी तरह छोड़ नहीं सकते, इसीसे होते हैं—दिवालिया होनेका मरणाकर्षण सबसे बड़ा सब्लाइम आकर्षण है। फिलहाल इस विषयकी आलोचनासे कुछ फायदा नहीं, एक प्रश्न मनमें उठता है, तुमसे पूछ लूँ। एला जैसी सुन्दरी साधारणतः देखनेमें नहीं आती—इस बातको मानते हो तुम ?"

"मानता क्यों नहीं।"

"तो फिर उसे तुमने अपने अन्दर रखा किस बूतेपर है ?"

"कन्हाई, इतने दिनोंमें तुम्हें मुझको समझ लेना चाहिए था। आगसे जो डरता है वह आगका इस्तेमाल नहीं कर सकता। अपने काममें आगको मैं प्रथक् नहीं रखना चाहता।"

"अर्थात् उससे काम बिगड़े या सुधरे,—तुम परवाह नहीं करते।"

"सृष्टिकर्ता आगसे खेला करता है। निश्चित फलका हिसाब लगाकर सृष्टिका काम नहीं चलाया जा सकता; अनिश्चितकी प्रत्याशासे ही उसका विराट् प्रवर्तन है। ठंडा माल-मसाला लेकर अँगूठेसे दबा-दबाकर जो खिलौने बनाये जाते हैं, उसके बाजार-भावका हिसाब लगाकर लाभ करनेका मन मेरा नहीं है। यह जो अतीन लड़का आया है एलाके आकर्षणसे, उसके अन्दर आफत ढानेका डायनामाइट मौजूद है—उसके प्रति इसीलिए मेरी इतनी उत्सुकता है।"

"भाई साहब, तुम्हारी इस भीषण लैबोरेटरीमें हम लोग तो सिर्फ झाड़न कँधेपर डालकर बेहराका काम करते हैं। उन्मत्त होकर अगर कहीं कोई गैस या यंत्र टूट-फूटकर छिटक पड़े, तो हमारे कपार चकनाचूर हो जायँगे। इस बातको लेकर गर्व करनेका जोर हमारी खोपड़ीके भीतर नहीं है।"

"इस्तीफा देकर विदा क्यों नहीं ले लेते ?"

"फलका लोभ जो है हम लोगोंमें—तुम्हें न हो, यह दूसरी बात है। तुम्हारे ही दलालके मुँहसे एक दिन सुना था—Elixir of life (जीवनामृत) शायद मिल सकता है। तुम्हारी इस सत्यानासी रिसर्चके चक्करमें हम गरीब जो आ

पड़े हैं, वह निश्चित आशाके ही आकर्षणसे, अनिश्चितकी कुहकसे नहीं। तुम इसे देख रहे हो जुआरीकी नशीली आँखोंसे, हम देखते हैं रोजगारकी साफ निगाहसे। अन्तमें खतियौनी-बहीमें आग लगाकर हम लोगोंसे मजाक मत कर बैठना, भाई साहब! इसकी पाई-पाईमें हमारी छातीका खून है।"

"मेरे मनमें किसी तरहका अन्ध-विश्वास नहीं है, कन्हाई! हार-जीतके बारेमें तो एकदम सोचना ही छोड़ दिया है। विशाल कर्मके क्षेत्रमें मैं हूँ कर्ता, यहीं मैं अच्छा लगता हूँ, इसीसे हूँ—यहाँ हार भी बड़ी है, जीत भी बड़ी है। उन लोगोंने चारों तरफके द्वार बन्द करके मुझे छोटा करना चाहा था,—मरते-मरते मैं साबित कर देना चाहता हूँ कि मैं बड़ा हूँ। मेरी पुकार सुनकर कितने आदमी-से आदमी मृत्युकी अवज्ञा करके चारों ओर आ जुटे हैं; सो तो तुम देख ही रहे हो, कन्हाई। क्यों? मैं पुकार सकता हूँ, तभी तो। इस बातको मैं अच्छी तरह जानकर और जताकर जाऊँगा, फिर जो होगा सो होगा। तुम भी तो बाहरसे देखनेमें किसी दिन साधारण ही थे, पर तुम्हारी असाधारणताको मैंने प्रकाशित किया है। रसमें डुबो दिया है तुम लोगोंको, मनुष्योंको लेकर यह मेरी रसायनकी साधना है। इससे ज्यादा और क्या चाहिए? ऐतिहासिक महाकाव्यकी समाप्ति पराजयके महाश्मशानमें भी हो सकती है। परन्तु है तो महाकाव्य ही! गुलामीसे दबे इस अंगहीन मनुष्यत्वके देशमें अच्छी मौत मर सकना भी एक सुयोग है।"

"भाई साहब, मुझ जैसे अकाल्पनिक प्रैक्टिकल आदमीको भी तुम खींच लाये इस घोरतर पागलपनके ताण्डव-नृत्यमंचपर।

जब सोचता हूँ, तो इस रहस्यका अन्त ही नहीं पाता मैं ।"

"मैं कंगालकी तरह कुछ भी नहीं चाहता, इसीसे तुम लोगोंपर मेरा इतना जोर है। मायासे बहकाकर लोभ दिखाके किसीको नहीं बुलाया। पुकारता हूँ असाध्यके बीचमें, फलके लिए नहीं, बल-वीर्य प्रमाणित करनेके लिए। मेरा स्वभाव है इम्पर्सनल—अवैयक्तिक। जो अनिवार्य है, उसे मैं अक्षुब्ध मनसे अंगीकार कर सकता हूँ। इतिहास तो पढ़ा ही है, देखा है कितने महा-महा साम्राज्य गौरवके अभ्रभेदी शिखरपर पहुँच गये थे, आज वे धूलमें मिल गये हैं—उनके हिसाबके खातेमें कहीं कोई भारी कर्ज जमा हो रहा था, जिसे वे चुका नहीं सके। और यह देश, चूँकि हमारा ही देश है, सौभाग्यके चिर-स्वत्वको लेकर इतिहासकी ऊँची गद्दीपर गद्दीनशीन होकर बैठा रहेगा और पराभवके समस्त कारणोंपर सिन्दूर चन्दन लगाकर घंटा बजाकर पूजा करता रहेगा, बेवकूफकी तरह ऐसे लाड़-प्यारका दावा किसपर करूँ, बताओ ? मैंने ऐसा कभी नहीं किया। वैज्ञानिकके निर्मोही मनसे मैं मान लेता हूँ कि जिसकी मरण-दशा आ गई है, वह मरेगा ही।"

"तब !"

"तब ! देशकी चरम दुरवस्था मेरा सिर नीचा नहीं कर सकती, मैं उससे भी बहुत ऊँचा हूँ—आत्मामें अवसाद न आने दूँगा—मरनेके सारे लक्षण देखकर भी।"

"और हम लोग !"

"तुम लोग क्या नन्हें बच्चे हो ! बीच समुद्रमें जिस जहाजका पेंदा सात जगहसे फट गया है, रो-पीटकर मंत्र पढ़कर बिधाताकी दुहाई देकर क्या उसे बचा सकते हो ?"

"अगर न बचा सके तो ?"

"तो क्या ! तुम कई जनोंने जान-बूझकर तूफानके आगे उस डूबते जहाजका घातक पाल चढ़ा दिया है, तुम लोगोंका कलेजा नहीं काँपा। ऐसे जितने आदमी मिले हैं, डूबते-डूबते उन्हींको लेकर हमारी जीत है। रसातलको जानेके लिए जो देश अन्धेकी तरह तैयार है, उसीके मस्तूलपर तुम लोग अन्त तक जयपताका फहरा रहे हो—न तो तुम लोगोंने झूठी आशा की है, न कंगालपन दिखलाया है और न निराशासे छाती फाड़-फाड़के रोये ही हो। तुम लोगोंने तब भी पतवार नहीं छोड़ी जब कि जहाजका पेंदा पानीसे भर गया है। पतवार छोड़नेमें ही कायरता है—बस, तुम जितनोंको मैंने पाया, मेरा काम तो हो गया उन्हींसे। उसके बाद ? कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।"

"तुम जो-कुछ कह रहे हो, उसमें एक मुख्य बात छूट गई मालूम होता है।"

"कौन-सी बात ?"

"तुम्हारे मनमें क्या क्रोध भी नहीं है ? इतने इम्पर्सनल हो तुम !"

"क्रोध किसपर ?"

"अंगरेज़ोंपर।"

"जो जवान शराब पीकर आँखें लाल बिना किये लड़ ही नहीं सकता, उस गँवारकी मैं अवज्ञा करता हूँ। क्रोधमें आकर कर्तव्य करनेसे उससे अकर्तव्य होनेकी ही अधिक सम्भावना है।"

"सो होने दो, मगर क्रोधका कारण मौजूद रहनेपर क्रोध न करना अमानविक है।"

"सारे यूरोपके साथ मेरा परिचय है, मैं अंगरेज़ोंको भी जानता हूँ। जितनी भी पाश्चात्य जातियाँ हैं, उनमें यह सबसे बड़ी जाति है। रिपुकी ताड़नासे वे मार नहीं सकते, यह बात नहीं; परन्तु पूरी तौरसे नहीं मार सकते—शरमाते हैं। उनके अन्दर जो बड़े हैं, उन्हींके सामने जवाबदेही करनेमें उन्हें सबसे बड़ा भय है—वे अपनेको भी भुलावा देते हैं और उन्हें भी। उनपर जितना क्रोध करनेसे फुल-स्टीम बनाया जा सकता है, उतना क्रोध मेरे द्वारा सम्भव नहीं।"

"अद्भुत हो तुम।"

"सोलहो-आना मारकी चोटसे वे हमारे मेरुदण्डको हमेशाके लिए चकनाचूर कर सकते थे। ऐसा वे नहीं कर सके। मैं उनके मनुष्यत्वको शाबाशी दूँगा। पराये देशमें शासन करते-करते उनका वह मनुष्यत्व क्षय होता जाता है, इसीसे उनमें मरण-दशा आती जाती है। विदेशोंका इतना ज्यादा बोझ और-किसी जातिके सिरपर नहीं है, इससे उनका स्वभाव नष्ट होता जा रहा है।"

"इसे वे समझें। मगर तुम जो अपने अध्यवसायको लगभग अहेतुक बनाये डाल रहे हो, यह मेरे लिए ज्यादती मालूम होती है।"

"यह तुम्हारी जबरदस्त भूल है! मैं अन्याय नहीं करूँगा, उन्मत्त नहीं होऊँगा, देशको देवी समझकर मा-मा पुकारकर आँसू नहीं बहाऊँगा, फिर भी काम करता रहूँगा, इसीमें मेरा जोर है!"

"शत्रुको अगर शत्रु समझकर द्वेष न करो, तो उसके विरुद्ध हाथ चलाओगे कैसे?"

"रास्तेपर पड़े हुए कंकड़ोंके विरुद्ध जैसे हथियार चलाते हैं, वैसे अप्रमत्त बुद्धिसे। वे अच्छे हैं या बुरे, यह तर्कका विषय नहीं है। उनका राज्य विदेशी राज्य है, उसने भीतर-ही-भीतर हमारा आत्म-लोप कर दिया है—इस स्वभाव-विरुद्ध अवस्थाको डिगानेकी कोशिश करके मैं अपने मानव-स्वभावको स्वीकार कर रहा हूँ।"

"परन्तु सफलताके विषयमें तुम्हें निश्चित आशा नहीं है।"

"न रहे, तो भी अपने स्वभावका अपमान न करूँगा—सामने चाहे मृत्यु ही सबसे बढ़कर निश्चित क्यों न हो, तो भी। पराभवकी आशंका है इसीलिए स्पर्द्धा करके उसकी उपेक्षा करके आत्म-सम्मानकी रक्षा करनी होगी। मैं तो समझता हूँ, अब यही हमारा अन्तिम कर्तव्य है।"

"वह आ रहे हैं रक्तगंगा बहानेवाले नकली भगीरथ। उन्हें चाय पिला आऊँ। साथ ही स्पष्ट भाषामें खबर भी दे दूँगा कि पुलिसको सब रिपोर्ट कर दी गई है। तुम्हारे दलके बेवकूफ कहीं मुझे जिन्दा न जला डालें।"

दूसरा अध्याय

एला आराम-कुर्सीपर बैठी है, पीठके पीछे तकिया लगा हुआ है। पैरपर पैर रखे, उसपर लकड़ीका बोर्ड रखकर देशबन्धु दासकी मूर्ति-अंकित कापीपर तल्लीन होकर कुछ लिख रही है। दिन खतम होनेमें देर नहीं, पर अभी तक बाल यों ही बिखर रहे हैं—सँवारनेकी फुरसत ही नहीं मिली। बैंगनी रंगकी खादीकी साड़ी पहने है,—उसमें मैल छिपा रहता है और इसीलिए एकान्तमें पहननेके लिए उसका अनाहत प्रयोजन है। हाथोंमें लाल रंगकी शंखकी दो चूड़ियाँ पड़ी हैं और गलेमें एक सोनेका हार। हाथी-दाँतके समान गोरा बदन है गठा हुआ; मालूम होता है बहुत कम उमर है, पर चेहरेपर परिणत बुद्धिकी गम्भीरता मौजूद है। खादीकी सब्ज रंगकी चादरसे ढकी हुई लोहेकी छोटी-सी खाट कमरेके एक कोनेमें, दीवारसे सटी हुई पड़ी है। जमीनपर नारायणी-स्कूलकी करघेकी बुनी दरीका फर्श बिछा हुआ है। एक तरफ लिखने-पढ़नेकी छोटी-सी टेबिल है, जिसपर बाकायदा बीचमें ब्लाटिंग पैड, एक तरफ कलम-पेन्सिल-दावात और दूसरी तरफ पीतलकी लुटियामें गन्धराज फूल सुशोभित है। दीवारपर पुराने जमानेके किसी फोटोग्राफकी प्रेतात्मा लटक रही है, जिसकी क्षीण पीली रेखाएँ विलीनप्राय हो रही हैं। अँधेरा होता आता है, बत्ती जलानेका समय हो गया। एला उठूँ-उठूँ कर रही थी कि इतनेमें आँधीकी हवाकी तरह खादीका परदा हटाकर अतीन्द्र कमरेमें आया और बोला—"एली!"

एला मारे खुशीके चौंक उठी, बोली—"असभ्य कहींके, बिना सूचना दिये इस कमरेमें आनेका साहस करते हो!"

एलाके पैरोंके पास धप-से जमीनपर बैठकर अतीनने कहा—"जीवन बहुत छोटा है और कानून-कायदे हैं काफी लम्बे, नियमोंकी रक्षा करते हुए चलने-लायक आयु सनातन युगमें थी मान्धाताकी। कलियुगमें उसका टोटा पड़ गया है।"

"अभी तो मैंने कपड़े भी नहीं बदले।"

"अच्छा ही है। तब तो मेरे साथ खप जाओगी। तुम रहो रथपर और मैं चलूँ पियादा बनकर—ऐसा द्वन्द्व तो मनुके नियमानुसार अधर्म है। किसी जमानेमें मैं था विशुद्ध भद्र पुरुष,—मेरी केंचुली तो तुम्हींने उतार फेंकी है। अब मेरी मौजूदा पोशाक कैसी देख रही हो?"

"कोशमें इसे पोशाकमें नहीं शुमार किया गया।"

"तो किसमें शुमार है?"

"शब्द ढूँढ़े नहीं मिल रहा। शायद भाषामें ही न हो। कुरतेके सामने यह जो टेढ़ी-मेढ़ी भौंडी सींवनका दाग है, यह क्या तुम्हारी अपनी सींवनका लम्बा-चौड़ा विज्ञापन है?"

"तकदीरकी मार गहरी होनेपर भी मैं उसे छातीसे लगा लेता हूँ—यह उसीका परिचय है। इस कुरतेको दरजीके हाथ सौंपनेकी हिम्मत नहीं होती, आखिर उसके भी तो आत्म-सम्मानका ज्ञान होगा।"

"मुझे क्यों नहीं दिया?"

"नव युगका सुधार-भर लिया है तुमने, फिर उसपर पुराने कपड़ेका संस्कार?"

"इसे सहन करनेकी ऐसी कौन-सी जरूरत थी?"

"जिस जरूरतसे भले-आदमी अपनी स्त्रीको सहन करते हैं।"

"इसके मानी ?"

"इसके मानी हैं, एकसे ज्यादा न होना।"

"क्या कह रहे हो तुम, अन्तू! इतनी बड़ी दुनियामें इसके सिवा तुम्हारे पास और दूसरा कुरता ही नहीं ?"

"बढ़ाकर कहना अनुचित है, इसलिए घटाकर कहा है। पूर्व-आश्रममें श्रीयुत अतीन्द्र बाबूके पास कपड़े थे बहुत और बहुत प्रकारके। इतनेमें देशमें आ गई बाढ़। तुमने अपनी वक्तृतामें कहा, ऐसे आँसू बहानेवाले बुरे दिनोंमें, (याद है आँसू बहानेवाले विशेषणकी ?) जब कि हजारों भाई-बहनोंको अपनी लाज बचाने लायक कपड़े मयस्सर नहीं, जिनके पास जरूरतसे ज्यादा कपड़े हैं, उन्हें लज्जा आनी चाहिए। बड़े ढंगसे कहा था तुमने। तब तुम्हारे सम्बन्धमें प्रकाश्य रूपसे हँसनेका साहस नहीं था मुझमें; पर मन-ही-मन हँसा था। निश्चित जानता था कि जरूरतसे ज्यादा कपड़े होंगे तुम्हारे बक्समें। मगर औरतोंके लिए पचास रंगके पचास कपड़े हों, तो वे पचासों ही महज जरूरी हैं। उन दिनों देश-हितैषिणियोंमें होड़ चल रही थी,—कौन कितना दान-संग्रह कर सकती है। ले आया अपने कपड़ोंका ट्रंक तुम्हारे चरणों-तले। तालियाँ बजा उठीं मारे खुशीके।"

"यह कौन-सी बात है ? मैं क्या जानती थी कि इस तरह उँड़ेल दोगे अपना सब-कुछ ?"

"अचम्भा क्यों करती हो ? दुःसाध्य हानि उठानेकी शक्तिका संचार' इस देहमें इतनी तेजीसे किसने किया था ?

संग्रहका भार अगर अपने गणेश मजूमदारपर होता, तो उसका पौरुष मेरे बक्सको बहुत ही कम नुकसान पहुँचाता।"

"छि-छि, अन्तू, क्यों तुमने मुझसे कहा नहीं ?"

"अफसोस मत करो। बिलकुल ही शोचनीय अवस्था हो, सो बात नहीं ; दो कुरते रंगवाकर रख दिये हैं नित्यकी आवश्यकताके लिए, नम्बर-वार धो-धोकर पहना करता हूँ। और भी दो तहियाये हुए रखे हैं आपद्धर्मके लिए। अगर किसी दिन इस सन्दिग्ध संसारमें अपनेको शरीफ खानदानका साबित करनेकी जरूरत पड़ी, तो उसके लिए उन दोनोंपर धोबी-दरजीका सर्टीफिकेट है ही।"

"सृष्टिकर्ताका सर्टीफिकेट तो इस चेहरे ही पर मौजूद है—गवाह पेश करनेकी जरूरत नहीं तुम्हें।"

"स्तुति ! नारीके दरबारमें स्तुतिकी अत्युक्ति तो हमेशासे पुरुषोंके ही अधिकारमें चली आ रही है, तुम उसे उलट देना चाहती हो ?"

"हाँ, चाहती हूँ। प्रचार करना चाहती हूँ कि आधुनिक कालमें स्त्रियोंके अधिकार बढ़ रहे हैं। पुरुषोंके विषयमें भी सच कहनेमें उन्हें बाधा न होनी चाहिए। नवीन साहित्यमें देखती हूँ—भारतीय महिलाएँ अपनी ही प्रशंसामें तल्लीन हैं, देवीकी प्रतिमा बनानेका कुम्हारका काम उन लोगोंने अपने ही हाथमें ले लिया है। वे अपनी जातिकी गुण-गरिमापर साहित्यिक रंग चढ़ा रही हैं। वह उनके अंगरागमें ही शामिल है, अपने हाथका पीसा हुआ—विधाताके हाथका नहीं। मुझे इसमें शरम मालूम होती है। अब चलो बैठकमें।"

"यहाँ भी बैठनेकी जगह है। मैं अकेला ही तो विराट सभा नहीं हूँ।"

"अच्छा तो बताओ, जरूरी बात क्या है?"

"अचानक कविताकी एक लाइन याद आ गई, पर वह कहाँ पढ़ी है, कुछ याद नहीं पड़ता। सवेरेसे हवा टटोलता फिरता हूँ। तुमसे पूछने आया हूँ।"

"बहुत ही जरूरी काम मालूम होता है। अच्छा कहो, कौन-सी लाइन है?"

"जरा सोचकर बताना, किसकी रचना है:—

तुम्हारी आँखोंमें था देखा

मैंने अपना सत्यानास।"

"किसी प्रसिद्ध कविकी तो है ही नहीं।"

"पहले सुनी हुई-सी नहीं मालूम होती तुम्हें?"

"परिचित गलेका आभास मिलता है थोड़ा-सा। दूसरी लाइन कहाँ गई?"

"मुझे विश्वास था, दूसरी लाइन तुम्हें अपने-आप ही याद आ जायगी।"

"तुम्हारे मुँहसे अगर एक बार सुन लूँ, तो जरूर याद जायेगी।"

"तो सुनो:—

दिवस-अन्तके उस प्रकाशमें

अरुण-वरण था चैत्रमास।

तुम्हारी आँखोंमें था देखा

मैंने अपना सत्यानास।"

अतीनके माथेपर हलकी-सी थपकी जमाकर एलाने कहा—

"आजकल तुमने यह क्या पागलापन शुरू कर दिया है?"

"उस दिन चैत मासकी उस कुघड़ीसे ही मेरा पागलापन शुरू हो गया है। जो दिन चरम तक पहुँचनेसे पहले ही निबट जाते हैं, वे फिर छाया-मूर्ति धारण करके कल्पलोकके दिगन्तमें घूमा-फिरा करते हैं। तुम्हारे साथ मेरा मिलन होगा उसी मरीचिकाकी सुहागरातमें। आज वहींके लिए तुम्हें बुलाने आया हूँ—तुम्हारे कामकी हानि करूँगा।"

गोदकी तख्ती और कापी फर्शपर फेंकते हुए एलाने कहा—"पड़ा रहने दो मेरा काम। बत्ती जला दूँ।"

"नहीं रहने दो—प्रकाश प्रत्यक्षको प्रमाणित करता है, चलो चलें दीपहीन पथसे अप्रत्यक्षकी ओर। चार सालसे कुछ कम हुआ होगा, स्टीमरपर मुकामाघाटसे गंगा पार हो रहा था। तब तक मैं अपनी पैत्रिक सम्पत्तिका फूटा किनारा पकड़े हुए था, जो कर्जके गढ़ेसे भरा था। तब तक मेरे तन और मनमें शौकीनीका रंग चढ़ा हुआ था—देवालिये दिनान्तके बादलोंकी तरह। सिल्कका कुरता पहने और कँधेपर मूँगेकी चादर डाले फर्स्ट-क्लास डेकपर बेंतकी आराम-कुरसीपर बैठा था। फेंके हुए अखबारके पन्ने इधरसे उधर फर-फर उड़ रहे थे, मजेसे उन्हें देख रहा था; मालूम होता था, मानो मूर्तिमती अफवाहें बगैर सिलसिलेके नाच रही हों। तुम थीं सर्वसाधारणके दलमें, कमर बाँधे हुए डेक-पैसेन्जर। अचानक मेरे पीछेकी अगोचरतामें से तुम तेजीसे निकल आईं मेरे सामने। आज भी आँखोंके सामने दिखाई देती है तुम्हारी वह ब्राउन रंगकी साड़ी; जूड़ेके दोनों तरफ पिनसे अटका हुआ साड़ीका पल्ला चेहरेके दोनों तरफ हवासे फूल रहा था। कोशिश करके

असंकोचका भाव लाकर तुमने पूछा था—आप खद्दर क्यों नहीं पहनते ?—याद है ?"

"बिलकुल साफ। अपनी मनकी तसवीरसे तुम बातें करा सकते हो,—मेरी तसवीर गूँगी है।"

"मैं आज उस दिनकी पुनरुक्ति करता जाऊँगा, तुम्हें सुनना होगा।"

"सुनूँगी नहीं तो क्या। वह दिन जहाँ मेरे नवीन जीवन-संगीतकी टेक है, बार-बार वहीं मेरा मन लौट जाना चाहता है।"

"तुम्हारे कंठका स्वर सुनते ही मेरा सारा शरीर चौंक उठा, वह स्वर मेरे मनमें आकर सहसा चाँदनीकी छटा-सा मालूम हुआ ; मानो आसमानसे कोई खूबसूरत चिड़िया उतर आई और एक ही झपट्टेमें मेरा पहलेका सब-कुछ छीन ले गई। अपरिचिता महिलाकी उस कल्पनातीत स्पर्द्धापर यदि गुस्सा हो सकता, तो शायद उस दिनकी पार लगानेवाली नैया मुझे इतने गहरे खतरनाक घाटपर न पहुँचा देती—अन्तमें शायद शरीफोंके मुहल्लेमें ही चालू रास्तेपर दिन बीतते। पर मन गीली दियासलाई-सा ठिठुर गया था, गुस्सेकी आग जली ही नहीं। मेरे स्वभावका सर्वप्रधान गुण है अहंकार, इसीसे चटसे खयाल आया, यह लड़की अगर खास तौरसे मुझे पसन्द न करती, तो इस तरह खास तौरसे मुझे ही धमकी देने न आती ; रहा खद्दर-प्रचार—यह तो एक बहाना है,—अच्छा, सच्ची बात थी कि नहीं, बताओ।"

"अजी हाँ, कितनी बार कह चुकी हूँ—बहुत देर तक डेकके एक कोनेमें बैठी हुई तुम्हें निहार-निहारकर देख रही थी।

भूल ही गई थी कि और-कोई मेरी इस हरकतको ताड़ रहा है या नहीं। मेरे जीवनमें वही मेरा सबसे बड़ा आश्चर्य है—एक चितवनमें चिर-परिचय! मन बोला, कहाँसे आया यह बहुत दूर जातका आदमी, अपने चारों ओरके मापके अनुसार तो बना नहीं, यह तो शैवालके बीचमें शतदल कमल है। तभी मन-ही-मन मैंने प्रण कर लिया था, इस दुर्लभ मनुष्यको खींच लाना होगा,—सिर्फ अपने ही पास नहीं, अपने सबके पास।"

"मेरी तकदीरसे तुम्हारी एकवचनकी चितवन दब गई बहुवचनकी चितवनके नीचे।"

"मेरे लिए कोई चारा नहीं था, अन्तू। कुन्तीने द्रौपदीको देखनेसे पहले ही कहा था, तुम सब मिलकर बर-बाँट लेना। तुम्हारे आनेके पहले ही मैंने शपथ खाकर देशका आदेश स्वीकार किया था, कहा था—अपने लिए कुछ भी न रखूँगी। मैं देशके लिए वाग्दत्ता हूँ।"

"अधार्मिक है तुम्हारा प्रण लेना, इस प्रणकी रक्षा करना भी तुम्हारे लिए प्रतिदिनका स्वधर्म-विद्रोह है। प्रणको अगर तोड़ देतीं, तो सत्यकी रक्षा होती। जो लोभ पवित्र है, जो अन्तर्यामीकी आदेशवाणी है, उसे तुमने अपने दलके पैरों-तले दलित किया है,—इसकी सजा तुम्हें भुगतनी पड़ेगी।"

"अन्तू, सजाकी तो हद नहीं, वह दिन-रात मुझे मार रही है। जो आश्चर्यजनक सौभाग्य सम्पूर्ण साधनाओंके अतीत है, जो दैवका अयाचित दान है, वह आया मेरे सामने, और फिर भी मैं उसे पा न सकी। हृदय-हृदयमें गाँठ बँधी हुई है, यह सब-कुछ होते हुए भी मैं यही चाहती हूँ कि इतना बड़ा दुःसह वैधव्य किसी स्त्रीके भाग्यमें न आवे। मैं एक मन्त्र-पढ़े घेरेके

भीतर थी, पर तुम्हें देखते ही मन उत्सुक हो उठा, बोला—टूट जाने दो सब घेरा। ऐसी उथल-पुथल हो सकती है, इस बातकी मैंने कल्पना भी न की थी। अगर कहूँ कि इसके पहले कभी मन विचलित ही नहीं हुआ, तो झूठ बोलना होगा। हाँ, चंचलताको जीतकर मैं अपनी शक्तिके गर्वसे बहुत खुश हुई थी। पर विजयका वह गर्व अब नहीं रहा, इच्छा खो दी है मैंने,—बाहरकी बात जाने दो, भीतरकी ओर गौरसे देखो, हार गई हूँ मैं। तुम वीर हो, मैं तुम्हारी बन्दिनी हूँ।"

"मैं भी हार गया हूँ अपनी इस बन्दिनीके आगे। मेरी हार अभी खतम नहीं हुई, प्रतिक्षणके युद्धमें प्रतिक्षण ही हार रहा हूँ।"

"अन्तू, फर्स्ट-क्लास डेकपर जब अपूर्व आविर्भावकी भाँति तुमने मुझे दूरसे दर्शन दिये थे, तब तक मैं यही समझती थी कि थर्ड-क्लासका टिकट हमारे आधुनिक आभिजात्यका एक उज्ज्वल निदर्शन है। अन्तमें तुम रेलपर चढ़े सेकेण्ड-क्लासमें, और मेरे तन-मनको भी जोरसे खींचा उसी क्लासकी तरफ। यहाँ तक कि मेरे मनमें एक चतुराई भी सूझी, सोचा कि गाड़ी छूटते वक्त जल्दीमें तुम्हारे डब्बेमें चढ़ जाऊँगी, कहूंगी—जल्दीमें गलती हो गई। काव्य-शास्त्रमें स्त्रियाँ ही अभिसारके लिए जाती रही हैं, सांसारिक विधि-निषेधकी बाधा होनेसे ही शायद कवियोंने ऐसी करुणा की है। ऊहापोह करनेवाले मनकी जितनी भी बिखरी हुई इच्छाएँ हैं, वे भीतरकी अँधेरी कोठरियोंमें भटकती हुई सिर धुनती फिरती हैं दीवारोंपर। स्त्रियाँ उनकी बातको परदेके बाहर किसी भी हालतमें स्वीकार नहीं करना चाहतीं। तुमने मुझसे मंजूर करा लिया है।"

"क्यों मंजूर किया ?".

"नारी-जातिका घमंड तोड़कर सिर्फ मंजूरी ही तो तुम्हें दे सकी हूँ, और तो कुछ दे नहीं सकी।"

सहसा अतीनने एलाका हाथ पकड़कर दबा लिया, कहने लगा—"क्यों नहीं दे सकीं ? किस बातकी रुकावट थी मुझे ग्रहण करनेमें ? समाजकी ? जाति-भेदकी ?"

"छि: छि, ऐसी बात मनमें भी न लाना। बाहरकी कोई बाधा नहीं, बाधा है भीतरकी।"

"काफी प्रेम नहीं हुआ अभी ?"

"काफीके कोई मानी नहीं होते, अन्तू! जो शक्ति हाथसे पहाड़को न हटा सकी हो, उसे कमज़ोर कहकर चिढ़ाओ मत। शपथ करके सत्य ग्रहण किया था, ब्याह न करूँगी। ऐसा न करनेपर भी, सम्भव था कि ब्याह न भी होता।"

"क्यों नहीं होता ?"

"नाराज मत होओ, अन्तू! प्यार करती हूँ, इसीसे तो संकोच है। मैं निःस्व हूँ, देना भी चाहूँ तो कितना दे सकती हूँ तुम्हें!"

"साफ-साफ बताओ भी तो ?"

"बहुत बार बता चुकी।"

"फिर बताओ, आज सब कहना-सुनना खतम कर लेना चाहता हूँ—इसके बाद फिर कभी न पूछूँगा।"

बाहरसे आवाज आई—"जीजी-रानी।"

"क्या रे अखिल, आ न भीतर।"

लड़केकी उमर सोलह या अठारह सालकी होगी। जिद्दी शरारत-भरा प्यारा चेहरा है। घुँघराले बाल हैं बड़े-बड़े उलझे

हुए ; कोमल गेहुँआ रंग है, चंचल आँखोंमें चमक है एक तरहकी। खाकी रंगकी कमीज और उसके ऊपर उसी रंगका लौट-कालरका ऊँचा कोट पहने है, कमीजका एक बटन खुला है, जिससे छातीका कुछ हिस्सा दिखाई पड़ता है। कमीजकी दोनों तरफकी जेबें तरह-तरहकी फालतू सम्पत्तिसे फूल उठी हैं, ऊपरकी जेबमें एक विचित्र फलोंवाला हिरनके सींगका चाकू है। कभी तो वह खेलनेकी नाव बनाता है और कभी एरोप्लेनका नमूना। हाल हीं में वह मल्लिक-कम्पनीके आयुर्वेदिक बगीचेमें पानी निकालनेवाली एक मशीन देख आया है—बिस्कुटकी टीन वगैरह बहुत-सी फालतू चीजोंको जोड़-जाड़कर उसीकी नकल करनेकी कोशिश कर रहा है। उँगली काट ली है, उसपर लत्ता लपेट रखा है,—एला पूछती है तो कुछ जवाब ही नहीं देता। एला इस मा-बाप-मरे लड़केकी दूरके नातेसे बहन लगती है,—बेचारी बहुत बर्दाश्त करती है। न-जाने कहाँसे वह एक ठिगनी जातका बन्दर सस्ते दामोंमें ले लाया है। यह जानवर भंडार-घरकी चोरी करनेमें बहुत दक्ष है। एलाके अपने छोटे-से परिवारमें यह जानवर एक बड़ा-भारी उपद्रव है।

कमरेमें घुसते ही अखिलने सलज्ज शीघ्रतासे आकर पैर छूकर एलाको प्रणाम किया। एला समझ गई कि उसका यह प्रणाम किसी एक विशेष अनुष्ठानसे सम्बन्ध रखता है, क्योंकि भक्तिवृत्ति उसके स्वभावके बाहरकी चीज है।

एलाने कहा—"अपने अन्तू-भइयाको प्रणाम नहीं करगा ?"

कुछ जवाब न देकर अखिल अतीनकी तरफ पीठ फेरकर

खड़ा हो गया। अतीन ठहाका मारकर हँस पड़ा। अखिलकी पीठ ठोंककर बोला—"शाबाश, सिर अगर झुकाना ही हो तो सिर्फ एक देवताके आगे। उस एकेश्वरीके आगे मैं भी सिर झुकाता हूँ,—अब प्रसादीके बँटवारेमें नाराजी मत दिखाओ भाई, काफी बचा हुआ है।"

एलाने अखिलसे कहा—"तुझे क्या कहना है, बोल।"

अखिलने कहा—"कल मेरी माका मरनेका दिन है।"

"अच्छा! मैं तो भूल ही गई थी। श्राद्धमें किसीको न्योतना चाहता है क्या?"

"किसीको नहीं।"

"तो क्या चाहता है?"

"पढ़ने-लिखनेकी छुट्टी चाहता हूँ तीन दिनकी।"

"क्या करेगा छुट्टी लेकर?"

"खरगोशके लिए पिंजड़ा बनाऊँगा।"

"खरगोश तो तेरा एक भी नहीं बचा, पिंजड़ा बनायेगा किसके लिए?"

अतीनने हँसकर कहा—"खरगोश तो कल्पना करनेसे ही हो सकते हैं, असल बात तो पिंजड़ा बनाना है। मनुष्य तो अनित्य है, आता है और चला जाता है, परन्तु चिरकालके लिए पक्की तौरसे पिंजड़ा बनानेका भार भगवान मनुसे लेकर उनके आधुनिक अवतार तक सबने ले रखा है। इस कामका उन्हें बड़ा जबरदस्त शौक है।"

"अच्छा, जा, तेरी छुट्टी है!"

दूसरी बात न करके अखिल चटसे भाग गया।

अतीनने कहा—"इसे मैं बस नहीं कर सका। मेरी

पुरानी सम्पत्तिकी झाड़न-पोंछनमें एक रिष्टवाच बची हुई थी, आधुनिक लड़कोंके लिए ऐसी चीज राजाके राज्यसे कम नहीं। एक दिन उसे मैंने देना चाहा, तो सिर हिलाकर चलता बना। इसीसे समझ सकती हो कि हम दोनोंका मामला साम्प्रदायिक हो उठा है, अन्तू-अखिल दंगा होनेके लक्षण हैं ये !"

"लड़कोंसे मेल करनेमें तुम्हारा जोड़ मिलना मुश्किल है, फिर भी इस बन्दरसे तुमने हार क्यों मान ली ?"

"बीचमें जो तीसरा पक्ष दखल दे रहा है, नहीं तो हम दोनों तो हरि-हर बन जाते। खैर जाने दो,—तुम क्या कैफियत देना चाहती हो ? क्यों मुझे अलग रखा ?"

"एक सीधी-सी बात तुम्हें याद क्यों नहीं रहती, कि तुमसे मैं उमरमें बड़ी हूँ ?"

"वजह यह कि इस सीधी-सी बातको मैं भूल नहीं सकता कि तुम्हारी उमर अठाईसकी है और मेरी अठाईस साल कुछ महीने ज्यादाकी है। प्रमाणित करना भी बहुत सहज है, क्योंकि दस्तावेज ताम्रशासनपर ब्राह्मी लिपिमें नहीं लिखा है।"

"मेरा अठाईस तुम्हारे अठाईसको पार करके बहुत दूर पहुँच गया है। तुम्हारे अठाईसमें यौवनकी सभी बत्तियाँ निर्धूम जल रही हैं। अब भी तुम्हारी खिड़कियाँ जिनकी ओर खुली हुई हैं, वे अनागत हैं—अचिन्त्य हैं।"

"एली, मेरी बात तुम किसी भी कदर समझना चाहती ही नहीं, इसीसे नहीं समझतीं। दलके सामने तुमने भगवानके सत्यके विरुद्ध सत्यका प्रण किया है, इसीसे नाना युक्ति-तर्कोंसे अपनेको बहला रही हो और साथ ही मुझे भी। बहलाओ, मगर यह बात मत कहो कि मेरे जीवनमें अब भी अनागत

अचिन्त्य दूर रह गया है। आ गया है वह, और वह हो तुम। तो भी, अभी तक वह अनागत है! तो क्या हमेशा ही उसकी तरफ खिड़की खुली ही रहेगी? उस शून्यके भीतरसे क्या बराबर मेरा ही आर्त स्वर बजता रहेगा—चाहता हूँ, तुम्हें चाहता हूँ,—और दूसरी तरफसे कोई प्रत्युत्तर ही न आयेगा?"

"नहीं आता, ऐसी बात कैसे कह रहे हो तुम, अकृतज्ञ? चाहती हूँ, चाहती हूँ, चाहती हूँ, तुमसे ज्यादा और कुछ भी नहीं चाहती इस दुनियामें। जिस समय आँखें चार होते ही 'शुभदृष्टि' सम्पन्न हो जाती, उस समय जो नहीं मिले। मगर फिर भी कहती हूँ, सौभाग्यसे नहीं मिले।"

"क्यों? नुकसान क्या था उसमें?"

"मेरा जीवन सार्थक हो जाता, उसकी कीमत ही क्या है! किसीके समान नहीं हो जो तुम; तुम महान हो। दूर हूँ, इसीसे तो देख सकी तुम्हारे उस असाधारण प्रकाशको। साधारण अपनेको लेकर तुम्हें जकड़ डालनेकी कल्पना करनेमें मुझे डर लगता है। मेरी छोटी-सी दुनियामें रोजमर्राकी तुच्छताके आदमी बनोगे तुम! कैसे समझाऊँ तुम्हें कि मैं कितना ऊपरको मुँह उठाकर तुम्हारा ललाट देख पाती हूँ? स्त्रियोंकी पूँजी क्या है, जीवनकी छोटी-छोटी बातें ही तो? उस बोझेसे तुम-सरीखे पुरुषके जीवनको भी ढक देनेमें डरती न हों, ऐसी स्त्रियाँ भी हैं; पर उन्होंने कितने जीवनोंको दुःखान्त बना दिया है, सो भी मैं जानती हूँ। अपनी आँखोंके सामने देखा है, लताके जालने वनस्पतिको बढ़ने नहीं दिया; वही स्त्रियाँ शायद समझती हैं उन्हें जकड़े रहना ही काफी है!"

"एला, जो पाता है, वही जानता है कि 'काफी' किसे कहते हैं।"

"अपनेको बहलाना नहीं चाहती, अन्तू! प्रकृतिने हम स्त्रियोंका आजन्म अपमान किया है। दुनियामें हम प्राणि-विज्ञानका संकल्प ढोती आई हैं, और साथ-साथ जीव-प्रकृतिके अपने जुगाड़ किये हुए अस्त्र और मन्त्र भी। उनका अगर ठीक तौरसे इस्तेमाल करना जानती होतीं, तो सस्तेमें हम अपना सिंहासन जीत लेतीं। साधनके क्षेत्रमें पुरुषको अपनी श्रेष्ठता प्रमाणित करनी पड़ती है। वह श्रेष्ठता क्या चीज है, सौभाग्यवश मुझे उसे जाननेका मौका मिला है। पुरुष हमसे बहुत बड़े हैं।"

"ऊँचाईमें!"

"हाँ, ऊँचाई ही में। प्रकृतिको लाँघकर बड़ा होनेका तोरण-द्वार उसीके माथेपर है। मेरे बुद्धि-उद्धि हो चाहे न हो, नम्र होकर अपनेको जो समर्पित कर सकी हूँ, सो सिर्फ ऊपरकी ओर देखकर।"

"किसी नीचने ऊधम नहीं मचाया?"

"मचाया है। हमारे खिंचावसे जो प्राणि-विज्ञानकी नीचेकी मंजिल तक उतर आते हैं, वे भद्दे होकर बिगड़ जाते हैं। व्यक्तिगत विशेष इच्छाएँ या आवश्यकताएँ न रहनेपर भी, नीचे खींच लानेके एक साधारण षड्यन्त्रमें हम सभी नारियाँ एक होकर मिल गई हैं,—सज-धजमें, बनाव-शृंगार और हाव-भावमें, बनावटी बातोंमें हम सब एक हैं।"

"बेवकूफोंको बहलानेके लिए?"

"हाँ जी हाँ, तुम लोग बेवकूफ तो हो ही! बहुत ही

आसान मन्त्रसे बहल जाते हो, इसीसे तो हम लोगोंको इतना गरूर है। हम बेवकूफोंको प्यार करती हैं, फिर भी उनकी मोटी बेवकूफीकी सबसे ऊँची चोटीपर देखा है सूर्योदय,—जब वे प्रकाश लाये, तो उनकी पूजा की है। गन्दे नीच निन्दक भी बहुत देखे हैं, और कंजूस कुत्सित भी देखे हैं। उन सबको छाँट-छूटकर और सबको मानकर भी तो बहुत बच रहता है! उन बचे हुओंको ही देखा है उज्ज्वल प्रकाशमें। उनमें से बहुतोंका नाम तक किसीका याद न रहेगा, फिर भी वे बड़े हैं—महान हैं।"

"एली, तुम्हारी बातें सुनकर मुझे लज्जा आती है, सोचता हूँ प्रतिवाद न करनेसे भद्दा मालूम होगा। साथ ही अच्छा भी लगता है। पर सच्ची बातमें तुमसे हार नहीं मान सकता। अपने देशके पुरुषोंमें कापुरुषताके जो लक्षण मैं बचपनसे देखता आया हूँ—जिसने मुझे बार-बार चिन्तामें डाला है—उसे आज मैं तुमसे कहूँगा ही। मैंने देखा है, मेरे जान-पहचानके परिवारमें और मेरे अपने घर भी, सासके असह्य अन्यायका आधिपत्य मैंने अपनी आँखोंसे देखा है। सासोंके अत्याचारकी कथाएँ इस देशमें हमेशासे प्रचलित हैं।—"

"हाँ, सो तो मैं जानती हूँ। अपने घरमें देखा है, जो आदमी खुद भीतरसे कमजोर है, कमजोरोंका यम तो वही है—उसके समान निष्ठुर और-कोई हो ही नहीं सकता।"

"एला, ऐसी बात कहकर तुम अपनी भावी सासकी निन्दाकी भूमिका मत बाँधो। नववधूपर अमानुषिक अत्याचारके समाचार अकसर सुननेमें आते हैं, और देखते हैं कि उसकी प्रधान नायिका हैं सास। मगर एक बात पूछता हूं, सासको

बेरोक-टोक अन्याय करनेका अधिकार दिया किसने है ? उन्हीं माके ललाओंने ही तो ! अत्याचारिणीके विरुद्ध अपनी स्त्रीकी लाज रखनेकी शक्ति जिनमें नहीं, उन नाबालिगोंकी क्या कभी भी ब्याह करनेकी उमर होती है ? जब होती है, तब वे अपनी स्त्रीके लला बन जाते हैं। जहाँ पुरुषका पौरुष कमजोर है, वहीं स्त्रियाँ उतर आती हैं, और उन्हें भी नीचताकी ओर उतारती रहती हैं। अब तो देखते हैं कि हमारे देशमें जो लोग कोई बड़ा काम करना चाहते हैं, वे स्त्रीको त्याग देना चाहते हैं—स्त्रैण कापुरुष हैं वे, स्त्रीसे डरते हैं। इसीलिए इस कापुरुषोंके देशमें तुमने प्रण किया है ब्याह न करनेका, इस डरसे कि कहीं कोई कोमल-कच्चा मन तुम्हारे जनाने प्रभावसे लचककर टेढ़ा न हो जाय। परन्तु जो यथार्थ पुरुष हैं, वे यथार्थ स्त्रीके जोरसे ही चरितार्थ होंगे—विधाताका यह अपने हाथका लिखा हुआ हुक्मनामा हमारे खूनमें मौजूद है। जो उस विधि-लिपिको व्यर्थ कर देता है, वह पुरुष-नामके योग्य नहीं। परीक्षाका भार तुम्हारे ही हाथमें था, परीक्षा करके मुझे देखा क्यों नहीं ?"

"अन्तू, बहस मैं कर सकती थी, पर तुम्हारे साथ बहस न करूँगी। क्योंकि, मैं जानती हूँ—तुमने अत्यन्त क्षोभमें आकर ही ये सब कुयुक्तियाँ पेश की हैं। मेरे प्रणकी बात तुमसे भुलाये भूलती नहीं।"

"नहीं, नहीं भूल सकता। तुमने तो कह ही दिया, पुरुष महान है, और तुम्हें डर इस बातका है कि स्त्रियाँ उन्हें छोटा बनाती हैं। स्त्रियोंको महान होनेकी जरूरत ही नहीं होती। वे जितनी हैं, उतने ही में सम्पूर्ण हैं। जो अभागा पुरुष महान नहीं है, वह असम्पूर्ण है;—उसके लिए सृष्टिकर्ता लज्जित है।"

"अन्तू, उस असम्पूर्णतामें भी हमें विधाताकी इच्छा दिखाई देती है,—वह महान इच्छा है।"

"एली, विधाताकी इच्छा ही बड़ी है, सो तो मैं नहीं कह सकता, क्योंकि उनकी कल्पना भी किसी अंशमें छोटी नहीं, उस कल्पनाकी तूलिकाके स्पर्शका जादू तो स्त्रियोंकी ही प्रकृतिमें लगा है, वे ही संसार-क्षेत्रमें कलाकारकी साधना लाई हैं, और उन्हींने अपने तन-मन-प्राणोंसे—रंग और स्वरसे अनिर्वचनीयको प्रकट किया है। यह सहज-स्वाभाविक शक्तिका कार्य है और इसीलिए सहज नहीं है। यह जो तुम्हारे शंख-से चिकने रंगके कंठमें सोनेका हार दिखाई दे रहा है, इसके लिए तुम्हें नोट्स याद नहीं करने पड़े। और ऐसी अभागिन भी मौजूद हैं, जो अपने जीवन-लोकमें रूपकी सृष्टिमें रस नहीं ला सकीं, या तो वे सोनेके मोटे कड़े पहनकर गृहिणी-पना दिखानेमें ही मुखरा हैं, या फिर दासी बनके आँगन लीपकर जीवन बिताती हैं। संसारमें इन सब असमर्थोंकी कोई शुमार नहीं।"

"मैं तो सृष्टिकर्ताको दोष दूँगी, अन्तू! स्त्रियोंको लड़नेकी ताकत क्यों नहीं दी उसने? छल करके क्यों उन्हें अपनी रक्षा करनी पड़ती है? इस बातको जब मैंने किताबोंमें पढ़ा कि दुनियामें सबसे बढ़कर जघन्य जो जासूसीका रोजगार है, उस रोजगारमें स्त्रियोंकी निपुणता पुरुषोंसे बढ़कर है, तब मैंने विधाताके पैरोंपर सिर धुनकर कहा था कि सात-जनममें भी मुझे लड़की होकर न पैदा होना पड़े। पुरुषोंको मैंने नारीकी आँखोंसे देखा है, इसीसे सब-कुछ लाँघकर मैंने उनकी श्रेष्ठता ही देखी है, मैं उनकी महानताको ही देख सकी हूं। जब देशके बारेमें सोचती हूं, तो उन सब सोनेके-टुकड़े लड़कोंकी ही बात सोचती

हूं ; मेरा देश तो उन्हींमें है । वे अगर गलती करें, तो बहुत बड़ी गलती करेंगे । मेरी तो छाती फटती है, जब मैं सोचती हूं कि अपने ही घरमें उन्हें जगह नहीं मिली । मैं उन्हींकी मा हूं, उन्हींकी बहन हूं, उन्हींकी लड़की हूं—इस बातको याद करके मेरी छाती भर आती है । अंगरेजी-पढ़ी लड़कियाँ अपनेको सेविका कहनेमें हिचकती हैं, पर मेरा सम्पूर्ण हृदय कह उठता है—मैं सेविका हूं, तुम लोगोंकी सेवा करनेमें ही मेरी सार्थकता है । हमारे प्रेमकी चरम सीमा इसी भक्तिमें है ।"

"अच्छी ही बात है ; तुम्हारी उस भक्तिके लिए बहुतसे पुरुष मौजूद हैं, पर मुझे क्यों ? भक्तिके बिना भी मेरा काम चल जायगा । स्त्रियोंके बारेमें जो लिस्ट तुमने दी है, मा-बहन और लड़कीकी, उसमें एक मुख्य बात तो रह ही गई,—मेरी ही तकदीरका दोष है ।"

"तुम्हारी अपेक्षा मैं तुम्हें अधिक पहचानती हूं, अन्तू ! मेरे लाड़-प्यारके छोटे-से पिंजड़ेमें दो ही दिनमें तुम्हारे डैने फड़फड़ा उठते । हम लोगोंके हाथमें तृप्तिके जो साधारण उपकरण हैं, वे एक-न-एक दिन तुम्हारे लिए निबट ही जाते । तब तुम समझ जाते कि मैं कितनी गरीब हूं । इसीसे मैंने अपनी सारी माँगें वापस ले ली हैं, अपने सम्पूर्ण हृदयसे तुम्हें देशके हाथ सौंप दिया है । वहाँ तुम्हारी शक्ति स्थानकी कमीसे तकलीफ न पायेगी ।"

अतीनकी दोनों आँखें चमक उठीं, मानो अत्यन्त व्यथित स्थानपर चोट लग गई हो । कमरेमें इधर-से-उधर चक्कर लगा आया एक बार । उसके बाद एलाके सामने आकर खड़ा हो

गया, बोला—"तुमसे कड़ी बात कहनेका समय आ गया है। मैं पूछता हूं, देशके हाथ हो चाहे और किसीके हाथ, तुम मुझे सौंपनेवाली कौन हो? तुम सौंप सकती थीं माधुर्यका दान, जो वास्तवमें तुम्हारी अपनी चीज थी। तुम उसे सेवा कहती हो तो वही सही, और वरदान कहना चाहो तो वह भी कह सकती हो। मुझे अगर अहंकार करने दो तो अहंकार करूँगा, अगर नम्र होकर अपने द्वारपर आनेके लिए कहो तो सो भी आ सकता हूं। लेकिन तुम अपने दानके अधिकारको आज तुच्छ-रूपमें देख रही हो। नारीकी महिमासे हृदयका ऐश्वर्य जो तुम दे सकती थीं, उसे छिपाकर तुम कह रही हो—देशके हाथ सौंप दिया तुम्हें! नहीं दे सकतीं तुम, नहीं दे सकतीं, कोई भी नहीं दे सकता। देशका मामला ऐसा नहीं, जो एक हाथसे दूसरे हाथमें सौंपा जा सके।"

एलाका चेहरा फक पड़ गया। बोली—"क्या कह रहे हो, साफ समझमें नहीं आया।"

"मैं कह रहा हूं, नारीको केन्द्र करके जो माधुर्यलोक विस्तृत है, उसका प्रसार यद्यपि देखनेमें छोटा मालूम होता है, पर उसके भीतरकी गहराईकी सीमा नहीं, वह पिंजड़ा नहीं है। लेकिन 'देश'की उपाधि देकर जिसमें मेरा घोंसला करार दिया था, वह तुम्हारे दलका बनाया हुआ देश है,—दूसरोंके लिए चाहे जो हो, मेरे स्वभावके लिए तो वही पिंजड़ा है। मेरी निजी शक्ति उसमें सम्पूर्णत: प्रकट नहीं हो पाती, इसीसे वह अस्वस्थ हो जाती है, विकृति आ जाती है उसमें; जो उसकी वास्तवमें अपनी चीज नहीं है, उसे व्यक्त करनेका पागलपन करती है,—शरमा जाता हूं, पर क्या करूँ, निकलनेका

दरवाजा जो बन्द है। जानती नहीं, मेरे डैने छिन्न-भिन्न हो गये हैं, दोनों पाँव ठिठुर जानेसे बेड़ी लग गई है। अपने देशमें अपना स्थान चुन लेनेकी जिम्मेवारी अपनी ही शक्तिपर है, वह शक्ति मुझमें थी। क्यों तुमने मुझे वह बात भुलवा दी?"

क्लिष्ट कंठसे एलाने कहा—"तुम भूले क्यों, अन्तू?"

"भुलानेकी शक्ति तुम लोगोंकी अमोघ है, नहीं तो भूलनेके कारण मैं लज्जित होता। मैं हजार बार मानूँगा कि तुम मुझे भुला सकती हो; अगर न भूलता, तो अपने पौरुषपर मुझे सन्देह होता।"

"अगर यही बात है, तो मुझे डाँट क्यों बता रहे हो?"

"क्यों? यही तो बतला रहा हूं। भुलाकर तुम वहीं ले जाओ, जहाँ तुम्हारी अपनी दुनिया है, अपना अधिकार है। दलकी बात प्रतिध्वनिके रूपमें कही जाय, तो कहना होगा कि तुम कुछ लोगोंने संसारमें सिर्फ एक ही कर्तव्यका मार्ग बाँध रखा है। तुम लोगोंके पत्थरके बने उस सरकारी कर्तव्य-पथपर मेरा जीवन-स्रोत बार-बार चक्कर खा-खाकर अपनी गति खो बैठता है।"

"सरकारी कर्तव्य?"

"हाँ, तुम लोगोंका स्वदेशी कर्तव्य यानी जगन्नाथका रथ। मन्त्रदाताने कहा, सब मिलकर एक मोटे रस्सेको कन्धेपर लेकर खींचते रहो आँखें मींचकर—बस, यही एकमात्र काम है। हजारों लड़के कमर बाँधकर लगे रस्सा खींचने। कितने ही पहियेके नीचे आ पड़े और कितने ही जिन्दगी-भरके लिए पंगु हो गये। इतनेमें वापसी रथका मन्त्र पढ़ा जाने लगा। रथ लौटा। जिनकी हड्डियाँ टूट चुकी थीं, उनकी तो हड्डियाँ

जुड़नेसे रहीं; आखिर पंगुओंको झाड़-बुहारकर रास्तेके किनारे धूलके ढेरमें डाल दिया गया। अपनी शक्तिपर भरोसा यानी आत्म-विश्वासकी तो शुरूसे ही ऐसी रेढ़ मार दी गई थी कि सभी-कोई अपनेको सरकारी खिलौनेके साँचेमें ढाल देनेके लिए स्पर्द्धाके साथ राजी हो गये। सरदारके रस्सा खींचते ही जब सबोंने नाच नाचना शुरू कर दिया, तब आश्चर्यके साथ सोचने लगे—इसीको कहते हैं शक्तिका नाच। नाचनेवालेने ज्यों ही जरा ढील दी, त्यों ही हजारों मानस-खिलौने रद्द कर दिये गये।"

"अन्तू, उनमें से बहुतसे जो पागलोंकी तरह कदम बढ़ाने लगे, तालको ठीक न रख सके।"

"शुरूसे ही जानना चाहिए था कि आदमी ज्यादा देर तक पुतली-नाच नहीं नाच सकता। माना कि मनुष्यके स्वभावको संस्कार भी बनाया जा सकता है, पर उसमें समय लगता है। स्वभावका गला घोंटकर मनुष्यको कठपुतली बना देनेसे काम आसान हो जाता है, यह समझना भूल है। मनुष्यको आत्म-शक्तिका वैचित्र्यवान जीव समझना सत्य ही है। मुझे अगर वैसा ही जीव समझकर श्रद्धा करतीं, तो मुझे तुम अपने इस गुटमें न खींच लातीं, बल्कि हृदयसे लगातीं।"

"अन्तू, शुरूमें ही मुझे तुमने अपमानित करके क्यों नहीं भगा दिया? क्यों मुझे अपराधी बनाया?"

"यह तो तुमसे बार-बार कहा है। तुम्हारे साथ मैं मिल जाना चाहता था, बात अत्यन्त सहज थी। लोभ तो दुर्जय था ही,—और प्रचलित मार्ग भी बन्द थे। आखिर जान हथेलीपर रखके चल पड़ा टेढ़े मार्गसे। तुम मुग्ध हो गईं। आज मालूम हो गया कि इसी रास्ते मरना होगा। मेरी वह

मौत जब पूरी हो चुकेगी, तब तुम मुझे दोनों हाथ बढ़ाकर वापस बुलाओगी—रात और दिन हमेशा अपने शून्य हृदयके पास बुलाती रहोगी।"

"तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, इस तरह मत कहो।"

"बेवकूफ-सा बक रहा हूँ, रोमान्टिक-सा सुनाई दे रहा है। मानो देह-हीन वस्तु-हीन पानेको ही पाना कहते हों! मानो तुम्हारा उस दिनका विरह आजके प्रतिहत मिलनकी कीमत एक कौड़ी भी चुका सकता है!"

"आज तुम्हें बातोंने पकड़ लिया है, अन्तू!"

"क्या कहती हो! आज पकड़ा है! हमेशासे पकड़ रखा है। जब मेरी उमर कम थी, अच्छी तरह मुँह भी न खुला था, तभी उस मौन अन्धकारके भीतरसे बातें फूट-फूटकर निकलना चाहती थीं, कितनी उपमाएँ, कितनी तुलनाएँ, कितनी असंलग्न बातें, कोई ठीक है! जब उमरपर आया, साहित्यालोकमें प्रवेश किया, तो देखा कि इतिहासके हर रास्तेपर राज्य-साम्राज्यके भग्न स्तूप हैं, देखा कि वीरोंकी रणसज्जाएँ छिन्न-भिन्न पड़ी हैं, विदीर्ण जयस्तम्भोंकी दरारोंमें से पीपलके पौधे निकल रहे हैं,—अनेक शताब्दियोंके अनेक प्रयास धूलके स्तूपोंमें स्तब्ध पड़े हैं। समयके उस कूड़े-करकटके ढेरके ऊपर सिर्फ एक अटल वाणीका ही सिंहासन दिखाई दिया। उस सिंहासनके चरणोंके पास युग-युगान्तरकी तरंगें साष्टांग लोट रही हैं। कितने ही दिन मैंने कल्पना की है कि मैं उस सिंहासनके स्वर्ण-स्तम्भोंपर अलंकार रचनेका भार लेकर आया हूं। तुम्हारे अन्तूको आजसे नहीं, हमेशासे बातोंने पकड़ रखा है। उसे तुम कभी भी, किसी दिन, ठीक-ठीक पहचान सकोगी, इसकी आशा अब नहीं

रही।—उफ, उसे तुमने अपने दलके शतरंजके मुहरोंमें दाखिल कर लिया!"

एलाने चौकीसे उतरकर अतीनके पैरोंपर अपना सिर रख दिया। अतीनने उसे उठाकर पास बिठा लिया। कहा—"तुम्हारी इस छरहरी देहको मैंने अपनी बातोंसे ही मन-ही-मन सजाया है, तुम मेरी संचारिणी पल्लविनी लता हो, तुम मेरी 'सुखमिति वा दुःखमिति वा' हो। मेरे चारों तरफ अदृश्य आवरण है—वाणीका आवरण, साहित्यकी अमरावतीसे आकर वह भीड़को सम्हाले रखता है। मैं चिरस्वतन्त्र हूँ, इस बातको जानते हैं तुम्हारे मास्टर साहब, फिर भी मुझे विश्वास क्यों करते हैं?"

"इसीलिए विश्वास करते हैं। सबके साथ मिलनेके लिए तुम्हें उनके बराबर उतरना पड़ता है। तुम स्वयं किसी भी तरह नीचे उतर नहीं सकते। तुमपर मेरा विश्वास इसीलिए है। कोई भी स्त्री किसी भी पुरुषको इतना विश्वास नहीं कर सकी होगी। तुम यदि साधारण पुरुष होते, तो साधारण स्त्रीकी तरह ही मैं तुमसे डरा करती। निर्भय है तुम्हारा संग।"

"धिक् है उस निर्भयको। भय होता, तो कम-से-कम उस पुरुषकी उपलब्धि तो करतीं। देशके लिए दुःसाहसका दावा करती हो तो अपने जैसी महीयसीके लिए क्यों न करोगी? कापुरुष हूँ मैं। असम्मतिके निषेधको भेदकर क्यों मैं तुम्हें जबरदस्ती हरण करके न ले जा सका बहुत पहले ही, जब कि समय हाथमें था? भद्रता! प्रेम तो बर्बर होता है! उसकी बर्बरता पहाड़ हटा देती है अपना रास्ता करनेके लिए। पागल झरना है वह, सभ्य शहरोंका पालतू नलका पानी नहीं।"

एला चटसे उठ खड़ी हुई, बोली—"चलो अन्तू, भीतर चलो।"

अतीन भी उठकर खड़ा हो गया, बोला—"डर! इतने दिनों बाद डर शुरू हुआ! जीत हो गई मेरी। पहले-पहल जब यौवन आया, तब तक स्त्रियोंको नहीं पहचाना। कल्पनामें उन्हें दुर्गम दूर रखकर देखा है; यह प्रमाणित करनेका समय निकल गया कि तुम लोग जो चाहती हो, वही मैं चाहता हूँ। भीतरसे मैं पुरुष हूँ, बर्बर उद्दाम। समयको अगर न खोता, तो अभी तुम्हें वज्रबन्धनसे धर दबाता, तुम्हारी पसलियाँ चरचरा उठतीं; तुम्हें सोचनेका समय ही न देता, रोनेके लिए साँसें भी तुममें बाकी न छोड़ता, निष्ठुरकी तरह खींच ले जाता तुम्हें अपने कक्षके मार्गमें। आज जिस मार्गमें आ पड़ा हूँ, वह मार्ग तलवारकी धारके समान संकीर्ण है, वहाँ एक साथ दो जनोंके चलनेकी जगह ही नहीं।"

"मेरे डाकू, जबरदस्ती छीन ले जानेकी जरूरत नहीं तुम्हें। लो, यह लो, मैं तुम्हारी ही हूँ।"

कहते-कहते दोनों हाथ बढ़ाकर वह अतीनके पास पहुँच गई और आँखें मींचकर उसकी छातीसे लगकर उसने उसके मुँहकी तरफ अपना मुँह बढ़ा दिया।

खिड़कीमें से एलाने सड़ककी तरफ जो देखा, तो सहसा चौंककर बोली—"गजब हो गया! वह देखो, देखते हो?"

"क्या?"

"उस चौराहेपर। जरूर बट्टू है वह—यहीं आ रहा है।"

"आने लायक जगहको वह जानता है।"

"उसे देखते ही मेरा सारा शरीर संकुचित हो उठता है।

उसके स्वभावमें मांस बहुत-सा है, बहुत चरबी है। जितनी ही मैं उससे बचनेकी कोशिश करती हूँ—अपनेसे उसे दूर रखना चाहती हूँ, उतना ही वह पास आ जाता है। गन्दा है, गन्दा है वह आदमी।"

"मुझे वह देखे नहीं सुहाता, एला!"

"उसके बारेमें अनुचित कल्पना करनेके कारण मैं अपनेको शान्त करनेकी बहुत कोशिश करती हूँ—पर किसी भी तरह कर नहीं पाती। दूरसे उसकी फटी-फटी आँखें अपने लालायित स्पर्शसे मानो मेरा अपमान किया करती हैं।"

"उसकी कुछ परवा न करो, एला! मन-ही-मन उसके अस्तित्वकी बिलकुल उपेक्षा नहीं कर सकतीं?"

"उससे मैं डरती हूँ, इसीलिए वह ध्यानसे हटाये नहीं हटता। उसका एक भीतरका चेहरा मुझे दिखाई देता है—बिलकुल अष्टपद जन्तुकी तरह। मालूम होता है, वह अपने भीतरसे आठों चिपचिपे गन्दे पैर निकालकर किसी दिन मुझे असम्मानसे जकड़ डालेगा—निरन्तर इसी बातका षड्यन्त्र कर रहा है। इस बातको तुम नासमझ औरतोंकी आशंका समझकर हँसीमें उड़ा सकते हो, पर यह सच है कि भूतकी तरह यह मेरे सिरपर सवार है। सिर्फ अपने तईं नहीं, तुम्हारे लिए मुझे और-भी डर लगता है,—मैं जानती हूँ तुम्हारी तरफ उसकी ईर्ष्या साँपके फनकी तरह फुसकार रही है।"

"एला, ऐसे जानवरोंमें साहस नहीं होता, सिर्फ बदबू होती है, इसीसे उन्हें कोई छेड़ना नहीं चाहता। मगर मुझसे वह सर्वान्तःकरणसे डरता है, इसलिए नहीं कि मैं भयंकर हूँ, बल्कि इसलिए कि मैं उससे बिलकुल भिन्न जातिका हूँ।"

"देखो अन्तू, जीवनमें मैंने अनेक दुःख और विपत्तियोंकी सम्भावना सोच रखी है, उनके लिए मैं तैयार भी हूँ—पर इतना हमेशा चाहती हूँ कि किसी दिन किसी दुर्घटनामें उसके कवलमें न पड़ूँ, उससे तो मौत अच्छी।" कहते हुए उसने अतीनका हाथ पकड़कर दबा लिया, जैसे अभी तुरंत ही उद्धार करनेका समय आ गया हो।

"जानते हो अन्तू, हिंस्र जन्तुके हाथसे अपमृत्युकी कल्पना कभी-कभी मनमें आती है, तब देवतासे कहती हूँ—शेर या भालू खा जाय, सो भी अच्छा, पर ऐसा हरगिज न हो कि मुझे मगर कीचड़में खींच ले जाकर सड़ा-सड़ाकर खाय।"

"मेरी शुमार क्या शेर-भालुओंमें की गई है?"

"नहीं जी, तुम मेरे नरसिंह हो, तुम्हारे हाथसे मरनेमें ही मेरी मुक्ति है। वह सुनो, पैरोंकी आहट। ऊपर ही आ रहा है।"

अतीन्द्रने कमरेसे निकलकर जोर गलेसे कहा—"बटू, यहाँ नहीं, चलो नीचेकी बैठकमें।"

बटूने कहा—"एला-जीजी—"

"एला-जीजी अभी कपड़े बदलने गई हैं, चलो नीचे।"

"कपड़े बदलने? इतनी देरसे? साढ़े-आठ—"

"हाँ-हाँ, मैंने ही देर करा दी है।"

"सिर्फ एक बात है। पाँच मिनट।"

"वे बाथ-रूममें गई हैं। कह गई हैं, उनके खास कमरेमें कोई आवे, यह वे नहीं चाहतीं।"

"आप?"

"मेरे सिवा।"

बटू ओठोंमें मुस्कराया, उसका मुस्कराना बिलकुल स्पष्ट और व्यंग्यपूर्ण था। बोला—"हम लोग हमेशासे हैं, सो तो रह गये व्याकरणके साधारण नियमोंमें, और आपको दो दिन भी आये न हुए कि आप चटसे चढ़ गये आर्षप्रयोगमें! एक्सेप्शन फिसलनेका रास्ता है, ज्यादा दिन टिकनेका नहीं, इसीसे छोड़ दिया।"—कहकर जल्दीसे जूता खटखटाता हुआ नीचे चला गया।

एक छोटीसी आरी हाथमें लिये, उसे हिलाता हुआ, अखिल आ पहुँचा, बोला—"चिट्ठी है।" अपने सृष्टि-कार्यको वह अधूरा छोड़कर चला आया था।

"तुम्हारी जीजी-रानीकी?"

"नहीं, आपकी। आपके ही हाथमें देनेको कहा है।"

"किसने?"

"पहचानता नहीं।"—कहकर चिट्ठी देकर चला गया। चिट्ठीके कागजका लाल रंग देखते ही अतीन समझ गया कि यह खतरेका सिग्नल है। गुप्त भाषामें लिखी चिट्ठी पढ़ी, उसमें लिखा था—"एलाके घर अब नहीं, उसे बिना कुछ जताये ही इसी वक्त चले आओ!"

कार्यके जिस शासनको उसने स्वीकार कर लिया है, उसके असम्मानको वह आत्म-सम्मानके विरुद्ध ही समझता है। चिट्ठीको उसने बाकायदा टुकड़े-टुकड़े करके फेंक दिया। क्षण-भरके लिए वह बन्द बाथ-रूमके बाहर स्तब्ध होकर खड़ा रहा। फिर तेजीसे बाहर निकल गया। सड़कपर खड़े होकर उसने एक बार ऊपरकी खिड़कीकी ओर देखा। खिड़की खुली थी, बाहरसे

आराम-कुरसीका थोड़ा-सा हिस्सा दीख रहा था, और उसके साथ लाल-पीली धारियोंवाला चौखूंटे तकियेका एक कोना भी दिखाई दिया। अतीन चटसे उछलकर चलती ट्रामपर सवार हो गया।

तीसरा अध्याय

चारों ओर एक-दूसरेसे सटे हुए फीके-हरे गहरे-हरे पीले-हरे खाकी-हरे रंगोंके पेड़-पौधों और झुरमुटोंकी निविड़ता छाई हुई है। इधर-उधर कुछ तलैयाँ हैं, जिनमें पानीके बजाय बाँसकी सड़ी पत्तियाँ और कीचड़ भरा हुआ है। इस निविड़ताके बीचसे टेढ़ी-मेढ़ी बल-खाती-हुई एक कच्ची सड़क गई है, जिसे बैलगाड़ीके पहियोंने बुरी तरह रौंद डाला है। कहीं आलू और अरुई है तो कहीं घंटाकरन, नागफनी और सेंहुड़ आदि जंगली पौधे। मेंड़से घिरे हुए धानके खेतोंमें पानी भरा दीखता है। सड़क गंगाके घाट तक जाकर खतम हो गई है। पुराने जमानेकी लखौरी ईंटोंसे बना हुआ टूटा-फूटा घाट तिरछा हो गया है, और गंगा कुछ उतर जानेसे सामने कछार पड़ गया है। घाटसे कुछ दूर आगे चलकर गंगा-किनारे एक जंगल-सा पड़ता है। उसमें एक खंडहर मकान है, जिसके बारेमें यह कहा जाता कि उसकी अभिशप्त छायामें डेढ़-सौ वर्ष पहलेके किसी मातृ-हत्याकारी पातकीके भूतने डेरा डाल रखा है। बहुत दिनोंसे किसी सजीव सत्त्वाधिकारीने उस अशरीरीके विरुद्ध अपना कोई दावा उपस्थित करनेकी कोशिश तक नहीं की।

यहाँका दृश्य है—परित्यक्त टूटा-फूटा पूजाका दालान और उसके सामने ऊबड़-खाबड़ लम्बा-चौड़ा आँगन, जिसमें जगह-जगह काई जमी हुई है। कुछ दूरीपर नदीके किनारे गिरता-हुआ खंडहर मन्दिर, टूटा-फूटा रासमंच, पुरानी दीवारोंका

भग्नावशेष और कछारपर वटवृक्षकी जटाओंमें छिपी हुई एक टूटी-फूटी नावका ढाँचा पड़ा हुआ है।

फिलहाल यहींपर अतीनका वासस्थान है। लगभग शामको अतीनके उस छायाच्छन्न दालानमें कन्हाई गुप्त आ पहुँचे। अतीन चौंक पड़ा, क्योंकि यहाँका पता कन्हाईको मालूम न होना चाहिए था।

"आप यहाँ!"

कन्हाईने कहा—"जासूसी करने निकला हूँ।"

"मजाकको जरा समझा दीजिए।"

"मजाक नहीं। मैं तुम लोगोंको रसद पहुँचानेवालोंमें से एक मामूली-सा आदमी हूँ। चायकी दूकानमें शनिने प्रवेश किया, तो निकल पड़ा वहाँसे। अन्तमें उन्हींके जासूसी रजिस्टरमें नाम लिखवा आया। मरघटका रास्ता छोड़कर जिनके सामने दूसरा कोई रास्ता ही नहीं, उनके लिए यह ग्रैण्ड ट्रंक रोड है,—देशकी छातीपर पूरबसे लेकर पश्चिम तक सीधा चला गया है।"

"चाय बनानेका काम छोड़कर अब खबरें बना रहे हैं?"

"बनानेसे यह रोजगार नहीं चलता। विशुद्ध खालिस खबरें ही देनी पड़ती हैं। जो शिकार जालमें फँस चुका है, मैं उसकी फाँस खींच देता हूँ। तुम्हारे हरेनकी साढ़े पन्द्रह आने खबरें उनके पास पहुँच चुकी हैं, आखिरी ज्यादतीकी खबर मैंने दे दी है। वह अभी जलपाइगुड़ीकी सरकारी धर्मशालामें होगा।"

"अब शायद मेरी पारी है?"

"ढंग तो ऐसे ही दिखाई देते हैं। बढ़ने बहुत-कुछ

रास्ता तैयार कर दिया है। मेरे हिस्सेमें जितना आया है, उसमें तुम्हें कुछ समय मिलेगा। पिछले मकानमें रहते हुए अचानक तुम्हारी डायरी खो गई थी। याद है?"

"हाँ, खूब याद है।"

"वह जरूर पुलिसके हाथ पड़ जाती, इसलिए मुझे ही चुरानी पड़ी।"

"आपने!"

"हाँ, जिसका साधु-संकल्प होता है, उसके भगवान सहाय होते हैं। एक दिन तुम उसे लिख रहे थे, मेरे ही कौशलसे पाँच मिनटके लिए तुम चले गये बाहर,—उसी समय उड़ा दी।"

अतीनने माथेपर हाथ रखकर कहा—"सब पढ़ी है आपने?"

"जरूर पढ़ी है। पढ़ते-पढ़ते रातके डेढ़ बज गये। बंगला भाषामें इतना तेज, इतना रस है, मैं पहले यह नहीं जानता था। उसमें बहुत-सी गुप्त बातें थीं; पर वे ब्रिटिश साम्राज्यके बारेमें नहीं।"

"आपने यह अच्छा काम किया?"

"कितना अच्छा किया, सो मैं नहीं कह सकता। तुम साहित्यिक हो, डायरी-भरमें कहीं भी तुमने छोटी-मोटी या ऊहापोहकी बातें नहीं लिखीं, किसीका नाम तक नहीं लिया। सिर्फ भावोंकी दृष्टिसे देखा जाय, तो उसमें इतनी घृणा, इतनी अश्रद्धाकी बू आती है कि अगर किसी पेन्शनयाफ्ता मन्त्री-पदप्रार्थीकी कलमसे निकलती, तो राज-दरबारमें वह मोक्ष तक प्राप्त कर सकता था। बट्ट अगर तुम्हारे पीछे न भी पड़ता,

तो वह डायरी ही तुम्हारे ग्रह-स्वस्त्ययनका काम करती।"

"कहते क्या हैं! सब पढ़ ली आपने?"

"हाँ, पढ़ी तो पूरी ही है। क्या कहूँ, बेटाजी, मेरे अगर लड़की होती और ऐसा साहित्य अगर वह तुम्हारी कलमसे निकलवा सकती, तो अपने पितृपदको मैं सार्थक मानता। सच कहता हूँ, तुम्हें गुटमें मिलाकर भाई साहब इन्द्रनाथने देशकी हानि ही की है।"

"आपके इस रोजगारकी खबर दलवालोंको सबको मालूम है?"

"किसीको नहीं।"

"मास्टर साहबको?"

"वे बुद्धिमान ठहरे, अन्दाज लगा सकते हैं; पर मुझसे पूछा नहीं और न मैंने कहा अभी तक।"

"मुझसे कहा है जो!"

"यही तो आश्चर्यकी बात है। मुझ-जैसा सन्देह-जीवी मनुष्य अगर किसीपर विश्वास न कर सके, तो दम घुटने लगता है। मैं भावुक नहीं, बेवकूफ भी नहीं, इसीसे डायरी नहीं रखता; अगर रखता, तो तुम्हारे हाथ सौंपकर मनका धुआँ निकाल देता।"

"मास्टर साहब—"

"मास्टर साहबको खबरें दी जा सकती हैं, पर मन नहीं खोला जा सकता। इन्द्रनाथका मैं प्रधान मन्त्री हूँ, पर उनकी सब बातें मुझे मालूम हों, इसकी कल्पना भी न करना। ऐसी बातें भी हैं, जिनकी कल्पना करनेकी भी हिम्मत नहीं पड़ती। मेरा विश्वास है, हमारे दलसे जो अपने-आप ही झड़ने लगते हैं, इन्द्रनाथ मेरी तरह ही उन्हें झाड़-पोंछकर फेंक देते हैं

पुलिसके कूड़ेखानेमें। काम है तो गर्हित, पर निष्पाप है। पहलेसे कहे देता हूँ, किसी दिन उनकी या मेरी ही सहायतासे तुम्हारे हाथोंमें अन्तिम हथकड़ी पड़ेगी, तब कुछ खयाल मत करना, अच्छा। तुम्हारे यहाँ आनेकी खबर पहले-पहल बटू ही ने थानेके कानों तक पहुँचाई है। लिहाजा मुझे भी बाजी मारनी पड़ी। मैंने फोटोग्राफके साथ प्रामाणिक खबर पहुँचाई। अब कामकी बात कहता हूँ, सुनो। तुम्हें चौबीस घंटेका समय देता हूँ। उसके बाद भी अगर तुम यहीं बने रहे, तो मैं ही तुम्हें थानेके रास्ते तक पहुँचा दूँगा। यहाँसे कहाँ जाना होगा, विस्तारके साथ उसका नक्शा दिया जाता है—इसके हरूफ तो तुम जानते ही हो, फिर भी कंठस्थ करके इसे फाड़ फेंको। यह लो मैप। रास्तेके इस तरफ तुम्हारा ठिकाना है, स्कूलके कोनेके घरमें। उसके ठीक सामने ही थाना है। वहाँ एक राइटर-कान्स्टेबिल मिलेगा तुम्हें। दूरके रिश्तेमें वह मेरा नाती लगता है, नाम है राघव बयाल। पछाँह रहते उसे तीन पुश्तें गुजर चुकीं। तुम्हें मास्टरीका काम मिला है। वहाँ पहुँचते ही राघव तुम्हारे ट्रंक-वंक देखेगा, कपड़ोंकी तलाशी लेगा, एक-आध रौंदे-औंदे भी जमायेगा। उसे तुम भगवानकी दया समझकर झेल लेना। रघुवीरकी हिन्दी भाषामें हर वक्त यह तत्त्व प्रकट होता रहता है कि बंगाली मात्र उसकी सुसरालके रहनेवाले हैं। तुम प्रतिवाद करनेकी कोशिश मत करना और जीते-जी कभी इधर मत आना। साइकिल बाहर पड़ी है, इशारा पाते ही सवार होकर चल देना। अब आओ, बेटाजी, अन्तिम बार गले लग लें।"

गले लगकर कन्हाई चल दिया वहाँसे।

अतीन चुपचाप बैठा रहा। अपने भीतरकी ओर दृष्टि दौड़ाकर देखने लगा। असमयमें आ पहुँचा उसके जीवन-नाटकका अन्तिम अंक, यवनिका अब गिरने-ही-वाली है, प्रकाश अब बुझने-ही-वाला है। यात्रा शुरू हुई थी निर्मल प्रभातके प्रकाशमें, वहाँसे आज बहुत दूर आ पहुँचा है। चलते समय हाथमें जो तोशा था, वह भी कुछ नहीं बचा। मार्गके अन्तिम भागमें तो उसने अपनेको सिर्फ ठग-ठगकर ही पेट भरा है। एक दिन सहसा रास्तेके मोड़पर सौन्दर्यका अपूर्व दान लेकर जो भाग्यलक्ष्मी उसके सामने आ खड़ी हुई थी, मानो वह अलौकिक थी! ऐसा अपरिसीम ऐश्वर्य उसके इस जीवनमें कभी प्रत्यक्ष हो सकता है, इस बातकी कल्पना भी उसके दिमागमें न आई थी, सिर्फ काव्य और इतिहासमें उसका कल्परूप देखा था। बार-बार उसके मनमें आया है कि दान्ते और बियात्रिचे नया जन्म ले रहे हैं हम-दोनोंमें। उस ऐतिहासिक प्रेरणाने ही उसके मनके भीतर बातें की हैं, दान्तेकी तरह ही वह राष्ट्रीय क्रान्तिके भँवरमें कूद पड़ा था; मगर उसमें सत्य कहाँ, वीर्य कहाँ, गौरव कहाँ; देखते-देखते अनिवार्य वेगसे जिस कीचड़की ओर वह खिंचता चला गया, उस नकाबपोश चोरी-डकैती खून-खराबीके अन्धकारमें इतिहासका आलोक-स्तम्भ कभी न खड़ा होगा। आत्माका सर्वनाश करके अन्तमें आज वह देख रहा है कि कोई भी वास्तविक फल नहीं है उसमें, निःसन्देह पराभव है सामने। पराभवका भी मूल्य है, पर आत्माके पराभवका नहीं, जो उसे गुप्तचारिणी वीभत्स विभीषिकामें खींच लाया है, जिसका न अर्थ है और न अन्त।

दिनका प्रकाश क्रमशः म्लान हो गया। आँगनमें झींगुर

बोलने लगे। पासकी कच्ची सड़कसे बैलगाड़ी जा रही थी, उसका आर्तस्वर सुनाई देने लगा।

इतनेमें सहसा आँधीकी तरह बड़ी तेजीसे एला वहाँ आ पहुँची। ऐसी अव्यवस्थित रूपमें घबराई हुई आई कि जैसे आत्महत्याके लिए झोंकमें आकर पानीमें कूदने जा रही हो। अतीनके उछलकर खड़ा होते ही वह उसकी छातीपर जा पड़ी। भर्राए हुए स्वरमें बोली—"अतीन, अतीन, नहीं रहा गया।"

अतीनने धीरेसे उसे छुड़ाकर अपने सामने खड़ा कर लिया और उसके अश्रु-सिक्त मुखड़ेकी ओर देखता रहा। बोला—"एली, क्या काण्ड कर डाला तुमने ?"

उसने कहा—"मुझे नहीं मालूम, क्या किया ?"

"यहाँका पता कैसे मालूम हुआ ?"

एलाने गहरे अभिमानके साथ उलाहने-भरे स्वरमें कहा—"तुमने तो नहीं बताया अपना ठिकाना ?"

"जिसने तुम्हें बताया है, वह तुम्हारा हितैषी नहीं है।"

"यह भी मैं निश्चित जानती हूँ, पर तुम्हारी कुछ राहका पता न मिलनेसे मेरा मन शून्यमें उड़ता रहता था, असह्य हो उठा वह मेरे लिए। हितैषी-अहितैषीका विचार करने-लायक अवस्था नहीं रही मेरी। कितनी मुद्दतसे तुम्हें नहीं देखा, बताओ तो !"

"धन्य हो तुम !"

"तुम धन्य हो, अन्तू ! ज्यों ही मेरे घर आनेकी मनाही हुई, त्यों ही तुमने उसे मान लिया ! कैसे हुआ तुमसे ?"

"यह तो मेरी स्वाभाविक स्पर्द्धा है। प्रचण्ड इच्छाने मुझे अजगरकी तरह दिन-रात घुम-घुमाकर पीस-पीस मारा

है, फिर भी उसे मैं मान नहीं सका। वे मुझे बताते हैं सेन्टिमेन्टल—भावुक, उन लोगोंने मनमें विचार लिया था कि संकटके समय प्रमाणित हो जायगा कि मैं गीली मिट्टीका ही बना हूँ। वे सोच ही नहीं सकते कि भावुकता ही मेरी अमोघ शक्ति है।"

"मास्टर साहब भी इस बातको जानते हैं।"

"एली, ब्रिटिश-साम्राज्यमें इस भुतही मुहल्लेकी सृष्टि होनेके बादसे आज तक किसी बंगाली भद्र-महिलाने इस स्थानका स्वरूप निर्धारण नहीं किया।"

"उसका कारण यह है कि बंगालकी किसी भद्र-महिलाके भाग्यमें इतनी बड़ी गरज ऐसे दुःसह रूपमें किसी दिन प्रकट नहीं हुई।"

"परन्तु एली, आज तुमने जो काम किया है, वह अवैध है।"

"जानती हूँ इस बातको, अपनी कमजोरीको मानती हूँ मैं, फिर भी तोड़ूँगी नियम; सिर्फ अपनी ही तरफसे नहीं, बल्कि तुम्हारी तरफसे भी। रोज मेरा मन कहा करता है, तुम बुला रहे हो मुझे। उसका जवाब बिना दिये मेरे प्राण जो हाँफने लगते हैं। बताओ, मेरे आनेसे तुम खुश हुए हो?"

"इतना खुश हुआ हूँ कि उसे साबित करनेके लिए खतरेमें पड़नेको भी राजी हूँ।"

"नहीं, नहीं, तुम खतरेमें क्यों पड़ोगे? जो-कुछ आफत आये, मुझपर आये। तो अब मैं जाती हूँ, अन्तू।"

"हरगिज नहीं। तुम नियम तोड़के चली आई हो, मैं नियम तोड़के तुम्हें जकड़े रहूँगा। आओ, दोनों मिलकर

अपराधको समान कर लें। नये आश्चर्यके रूपमें एक दिन तुम्हारे मुखड़ेको देखा था बसन्ती-रंगमें, आज वह युगान्तर तक पिछड़ गया है। आओ, आज उस दिनका आह्वान किया जाय इस खंडहरमें। आओ, और भी पास आ जाओ।"

"ठहरो, जरा घर सम्हाल लेनेकी कोशिश कर लूँ।"

"हाय-हाय, गंजी चाँदपर कंघी फेरनेकी कोशिश!"

एलाने एक बार चारों तरफ देख लिया। जमीनपर कम्बल बिछा था और उसपर चटाई। तकियेकी जगह किताबोंसे भरा कैन्वसका एक पुराना थैला पड़ा था। लिखने-पढ़नेके लिए एक चीड़का बकस था, और एक कोनेमें सिकोरेसे ढकी हुई गागर रखी थी। टूटी टोकरीमें कुछ केले पड़े थे और उसीमें एक एनामेलकी दचकी हुई कटोरी, जो मौके-बेमौके चाय पीनेके काम आती है। दूसरे कोनेमें एक बड़ा चौड़ा सन्दूक है, उसपर मिट्टीकी बनी गणेशजीकी मूर्ति विराजमान है। उससे प्रमाणित होता है कि यहाँ अतीनका कोई और साथी भी रहता है। एक खम्भेसे लेकर दूसरे खम्भे तक रस्सी बंधी हुई है, जिसपर तरह-तरहके रंगोंके दाग लगे हुए कई मैले अंगौछे पड़े हैं। घर-भरमें नमीकी दम घुटानेवाली गन्ध है।

ठीक ऐसा न सही, पर इसी ढंगके दृश्य और भी देखे हैं एलाने। उससे विशेष दुःख नहीं हुआ उसे, बल्कि त्याग-वीर युवकोंको उसने मन-ही-मन शाबशी दी है। एक बार उसने किसी जंगलके किनारे अनिपुण हाथोंसे बने चूल्हेका भग्नावशेष देखा था, जिसके चारों ओर जले हुए चावल बिखर रहे थे। वह उसे राष्ट्रीय क्रान्तिके रोमान्सके

अंगारोंसे बनी हुई तसवीर-सी मालूम हुई है; पर आज दुःख और वेदनासे उसका गला रुँध आया। आरामके आलिंगनमें पड़े हुए धनी युवकोंकी अवज्ञा करना ही एलाका स्वभाव था। परन्तु अतीनको इस अपरिच्छिन्न मलिन अभावजन्य दरिद्रतामें देखकर उससे अपना मन मिला न सकी।

एलाके उद्विग्न मुँहकी ओर देखकर अतीनने हँसकर कहा—"मेरे ऐश्वर्यको स्तम्भित होकर देख रही हो। उसका विराट अंश नहीं दिखाई देता, इसीसे तुम विस्मित हो। हम लोगोंको पैर हलके रखने पड़ते हैं—जिससे भागते समय कोई टोक न सके, न कोई चीज ही रोक सके। कुछ दूरीपर जूट-मिलके मजदूरोंकी बस्ती है, वे मुझे मास्टर-बाबू कहते हैं। मुझसे चिट्ठी पढ़वा लेते हैं, खत लिखवा लेते हैं और समझ लेते हैं कि लेन-देनकी रसीद ठीक हुई या नहीं। उनमें किसी-किसीको सन्तान-वात्सल्यका भी शौक है, वे चाहते हैं लड़केको मजदूर-श्रेणीसे उठाकर हजूर-श्रेणीमें दाखिल करें। मेरी सहायता चाहते हैं,—कोई भेंटमें फल-फलारी लाता है तो कोई घरकी गायका दूध।"

"अन्तू, उस कोनेमें जो सन्दूक पड़ा है, वह किसकी सम्पत्ति है?"

"कुठौरपर और अकेला रहनेसे ही वह बड़े रूपमें दिखाई देता है। अलक्ष्मीकी झाड़ूमें लगकर रास्तेसे वह यहाँ आ पहुंचा है,—एक मारवाड़ीका है, तीसरी बार दिवालिया हुआ है बेचारा। मुझे शक हो रहा है, शायद दिवालिया होना ही उसका मुख्य व्यवसाय है। यह खंडहर उसके दो भतीजोंकी ट्रेनिंग एकाडेमी है। दोनों लड़के तड़के ही सत्तू खाकर काम

करने आते हैं, बस्तीकी मजदूरिनोंके लिए सस्ते दामोंके कपड़े रंगते हैं, बेचकर मूलधनकी ब्याज देते हैं, मूल भी कुछ-कुछ चुकाते जाते हैं। ये जो मिट्टीकी नादें देख रही हो, इन्हें मैं अपने यज्ञके नैवेद्यके काममें नहीं लाता,—इनमें रंग घोला जाता है। कपड़े उठाकर उस बकसमें रख जाते हैं। इसके सिवा उसमें बस्तीकी स्त्रियोंके कामकी तरह-तरहकी शृंगारकी सामग्रियाँ भी हैं,—बिल्लौरी चूड़ियाँ, कंघे, छोटे आईने, बाजूबन्द वगैरह-वगैरह। रक्षा करनेका भार है मेरे ऊपर और भूतोंपर। दोपहरके बाद तीन बजे सौदा बेचने चला जाता है, फिर यहाँ नहीं आता। कलकत्तेका मारवाड़ी है, न मालूम किस चीजकी दलाली करता है। मुझे अंग्रेजीदाँ जानकर इसी लोभसे मुझे अपना साझीदार बनाना चाहता था, जीवपर दया करके मैं राजी नहीं हुआ। मेरी आर्थिक अवस्थाकी भी खोज लगानेकी कोशिश की थी; मैंने समझा दिया कि पुरखोंके पास जो कुछ था, उसका चौदह-आना हिस्सा उन्हींके पुरखोंके घर पहुँच गया है।"

"यहाँ तुम्हारी कितने दिनकी मियाद है?"

"अन्दाजन चौबीस घंटेकी और समझो। इस आँगनमें रसमें विगलित नाना रंगोंकी लीला बराबर ज्यों-की-त्यों जारी रहेगी, पर अतीन्द्र विलीन हो जायगा पाण्डुवर्ण दूर-दिगन्तमें। मैं मना रहा हूँ कि जिस मारवाड़ीको मेरी छूत लग चुकी है, उसे हथकड़ी-महामारी न आ दबाये। अभी तक यह नहीं कहा जा सकता कि बिना मूलधनके यहाँ उसे मेरे भाग्यका भागी बनना पड़ेगा या नहीं।"

"तुम्हारा भावी पता क्या होगा?"

"बतानेका हुक्म नहीं है।"

"तो क्या मैं कल्पना भी न कर सकूँगी कि तुम कहाँ हो?"

"कल्पना करनेमें क्या दोष है। मानस-सरोवरका तट अच्छा स्थान है।"

इसी बीचमें थैलेमें से किताबें निकालकर एला उन्हें उलट-पुलटकर देख रही थी। काव्य हैं, कुछ अंगरेजीके और दो-चार बंगलाके।

अतीनने कहा—"अब तक इन्हें ढोता फिरा हूँ, इस डरसे कि कहीं अपनी जात न भूल जाऊँ। इन्हींके वाणीलोकमें मेरा आदि-निवास था। पन्ने उलटते ही पेन्सिलसे चिह्नित उसकी गली-कूचियोंका पता लग जायगा। और आज! यह देखो, आँखें खोलकर!"

सहसा एला अतीनके पाँव पकड़कर जमीनपर लोट गई। बोली—"माफ करो अन्तू, मुझे माफ करो।"

"तुम्हें माफ करनेकी इसमें कौनसी बात है, एली? भगवान अगर हैं और उनकी असीम दया अगर है, तो वे मुझे माफ करेंगे।"

"जब तुम्हें जानती न थी, तब तुम्हें इस रास्तेमें लाकर खड़ा किया है मैंने।"

अतीन हँसकर कहने लगा—"अपने ही पागलपनकी फुल स्टीमसे इस कुजगह आ पहुँचा हूँ, इतनी ख्याति भी न दोगी मुझे? मुझे नाबालिगोंकी श्रेणीमें रखकर अभिभावक-पना दिखलाओगी, यह मुझसे न सहा जायगा, पहलेसे कहे देता हूँ। इससे तो अच्छा है मंचसे उतर आओ, मेरे मुँहकी ओर देखकर कहो—आओ आओ पिया, आधे आँचलपर आ बैठो।"

"सम्भव है कि ऐसा ही कहती, पर आज तुम इस तरह पागल कैसे हो उठे ?"

"पागल न होऊँ ? कहा न तुमने, अपने भुज-मृणालके जोरसे तुमने मुझे रास्तेपर निकाला है !"

"सच बात कहती हूँ तो गुस्सा क्यों होते हो ?"

"सच बात हुई ? मैं तो छिटककर आ पड़ा हूँ रास्तेपर अपने हृदयावेगसे, तुम तो निमित्त मात्र हो। और-किसी श्रेणीकी महिलाका निमित्त पाता, तो अब तक गोरा-काला सम्मिलन क्लबमें ब्रिज खेलता दिखाई देता, घुड़दौड़के मैदानमें गवर्नरके बक्सकी ओर स्वर्गारोहण-पर्वकी साधना करता। अगर साबित हो जाय कि मैं मूढ़ हूं, तो शानके साथ कहूँगा कि मूढ़ता स्वयं मेरी ही है, जिसको कि भगवद्दत्त प्रतिभा कहते हैं।"

"अन्तू, दुहाई है तुम्हारी, अब तुम फालतू बातें मत बको। तुम्हारी जीविकाको मैंने ही बहा दिया है, इस दुःखको मैं कभी भूल नहीं सकती। मैं देख रही हूँ, तुम्हारे जीवनकी जड़ उखड़ गई है।"

"इतनी देरमें अब हुआ है उस नारीका प्रकाश, जो वास्तविक है। इतने ही में पकड़ाई दे जाती हो, देशोद्धारके रंगमंचपर तुम रोमान्टिक हो। जिस गृहस्थीमें फूलकी थालीमें दूध-भात-साग-तरकारी परोसी जाती है, उसीके केन्द्रमें बैठी हो तुम बीजना हाथमें लिये। जहाँ राजनैतिक लट्ठका बोलबाला है, वहाँ तुम बिखरे हुए बाल और लाल-लाल आँखोंसे आ पड़ती हो अप्रकृतिस्थ अवस्थाकी झोंकमें, सहजबुद्धिसे नहीं।"

"इतनी बातें भी तुम्हें कहनी आती हैं, अन्तू, तुमसे औरतें भी हार मान जायँगी।"

"औरतोंको बातें करना भी आता है क्या ! वे तो सिर्फ बका करती हैं। बातोंके भयंकर तूफानसे सनातन मूढ़ताकी भीत तोड़नेके लिए किसी दिन मनमें आँधीके बादल जम उठे थे। उस मूढ़तापर ही तुम अपनी जातिकी तरफसे जयस्तम्भ चुनने चली हो शारीरिक बलपर।"

"तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, मुझे समझा दो, मेरी भूलसे तुमने भूल क्यों की ? क्यों तुमने जीविका-वर्जनका दुःख अंगीकार किया ?"

"वह तो मेरी व्यंजना थी, एक रुख था, अंगरेजीमें जिसे जेस्चर कहते हैं। वह मेरी अन्तिम समयकी भाषा थी। अगर दुःखको न अंगीकार करता, तो मुँह मोड़कर चली जातीं; किसी भी तरह समझतीं ही नहीं कि मैं तुम्हें कितना चाहता हूँ। उस बातको मजाकमें उड़ाकर यह मत कहो कि वह देशका प्रेम था।"

"देश क्या इसमें नहीं है, अन्तू ?"

"देशकी साधना और तुम्हारी साधना एक हो गई है, इसीसे देश इसमें है। किसी दिन बल-वीर्यके जोरसे योग्यता दिखाकर नारीको प्राप्त करना पड़ता था। आज उसी मरण-प्रणका मौका मिला है मुझे। उस बातको भूलकर तुच्छ जीविकाके अभावसे तुम्हें चोट पहुँची है, अन्नपूर्णा !"

"हम औरतें सांसारिक हैं। गृहस्थीकी कमियोंको नहीं सह सकतीं। मेरी एक बात तुम्हें रखनी ही होगी। मेरा एक पैतृक मकान है, और कुछ रुपये भी जमा हैं। दुहाई है तुम्हारी, बार-बार दुहाई देती हूँ, मेरी बात रखो, मुझसे रुपये लेनेमें संकोच मत करो। जानती हूँ मैं, तुम्हें इसकी सख्त जरूरत है।"

"सख्त जरूरत पड़नेपर मैट्रिकुलेशनकी नोट-बुक लिखनेसे लेकर मजदूरी तक खुली पड़ी है।"

"मैं मानती हूँ, अन्तू, मुझे अपने जोड़े हुए रुपये अब तक देशके काममें खर्च कर देने चाहिए थे। मगर रोजगार करनेकी शक्ति हम लोगोंमें कम होनेके कारण ही संचयमें हमारी अन्ध-आसक्ति होती है। डरपोक हैं हम।"

"यह तुम लोगोंकी सहजबुद्धिका उपदेश है। अभावमें स्त्रियोंका सौन्दर्य नष्ट हो जाता है।"

"हमारे घोंसले छोटे हैं, वहाँ छोटी-मोटी चीजें हम जमा करती रहती हैं। परन्तु वह सिर्फ जीने ही के लिए नहीं, बल्कि प्रेमकी आवश्यकताएँ मिटानेके लिए भी। मेरा जो कुछ है, सब तुम्हारे ही लिए है—इस बातको अगर समझ सको, तो जी जाऊँगी मैं।"

"हरगिज नहीं समझूँगा उस बातको। आज तक स्त्रियोंने सेवा ही दी है और पुरुषोंने जुगाई है जीविका। इसके विपरीत होनेसे हमारा सिर नीचा होता है। जिस चाहनाके लिए बिना संकोचके तुम्हारे सामने हाथ पसार सकता हूं, उसकी उपेक्षा करके तुमने प्रणका बाँध खड़ा किया है। उस दिन नारायणी-स्कूलका खाता लेकर तुम हिसाब मिला रही थीं। मैं पास जाकर बैठ गया, जैसे तूफानकी चोट खाकर चील जमीनपर आ पड़ती है। चोट खाया हुआ घायल मन लेकर आया था। कर्तव्यकी फालतू छाप लगी हुई चीजोंपर औरतोंकी वैसी ही अटल भक्ति होती है जैसी पंडोंके पैरोंपर यात्रीकी, उससे छुड़ा लेना असम्भव है। मुँह उठाकर देखा तक नहीं! बैठे-बैठे एकटक देखता रहा, जी चाहने लगा तुम्हारी उन

सुकुमार उँगलियोंसे मेरे तन-मनपर स्पर्श-सुधा झर पड़े। तुम्हें जरा भी दरद न आया; कंजूस, इतना भी निकालकर न दे सकी। मन-ही-मन कहा, शायद और भी ज्यादा कीमत देनी पड़ेगी। किसी दिन जब फूटा सिर और खूनसे लथपथ देह लेकर जमीनपर गिर पड़ूँगा, तब उस घायल हृदयको तुम जतनसे गोदमें उठाकर रखोगी।"

एलाकी आँखें भर आईं, बोली—"उफ़, तुमसे जीत नहीं सकती, अन्तू! इतना भी बिना दिये न ले सके? छीन क्यों नहीं लिया मेरा रजिस्टर? तुम समझ नहीं पाते, तुम्हारा ही संकोच मुझे संकुचित कर देता है। अन्तू, तुम्हारा स्वभाव एक जगह औरतोंसे मिलता है। प्रबल इच्छा रहते हुए भी, उद्दाम भावसे उसकी माँग पेश करनेमें तुम्हारी रुचि तुम्हें रोकती है।"

"वंशगत धारणा है यह, बचपन ही से रक्त-मांसमें समा चुकी है। बराबर सोचता आया हूँ, स्त्रियोंके तन-मनमें एक शुचिताकी मर्यादा मौजूद है, उनके शरीरके सम्मानकी सशंकित चित्तसे रक्षा करना हमारा वंश-परम्परागत अभ्यास है। मेरे कुंठित मनको जरा भी प्रश्रय देनेके लिए तुम्हारा मन अगर कभी भी पसीजे, तो मेरी तरफसे भिक्षा माँगनेकी राह न देखा करो। मैंने सीखा नहीं जो उस तरह माँगना। भूखकी सीमा नहीं, पर इससे पेटू नहीं बन सकता; मेरी प्रकृतिमें यह बात है ही नहीं।"

एला अतीनके पास और-भी सटकर बैठ गई, अतीनका सिर अपनी छातीसे लगाकर उसने अपना सिर भी झुका लिया। बीच-बीचमें आहिस्तेसे उसके बालोंमें उँगलियाँ

फेरने लगी। कुछ देर बाद अतीनने सिर उठाया, और एलाके हाथ अपनी मुट्ठीमें दबा लिये। कहने लगा—"जिस दिन मुकामामें जहाजपर सवार हुआ था, उस दिन दादी भाग्यदेवीने अपने अदृश्य हाथोंसे जो मेरे कान मल दिये थे, उसे मैं समझ नहीं सका। उसके बादसे ही मेरा मन अपनी स्मृतिके आकाशमें केवल आकाश-कुसुम ही चयन करता फिरा है। उस दिनकी बात तुम्हारे लिए पुरानी हो गई क्या?"

"जरा भी नहीं।"

"तो सुनो। नौकर मेरा भारी असबाब-नीचेके डेकसे लुढ़काकर ले गया था। मेरे पास रह गया था सिर्फ एक चमड़ेका सूट-केस। मैं कुलीके लिए इधर-उधर ताक रहा था। इतनेमें निहायत भले-मानसकी तरह सहसा तुमने पास आकर पूछा, 'कुली चाहते हैं, क्या जरूरत है, मैं लिये चलती हूँ।'—'हें-हें, करती क्या हैं' कहते-कहते ही तुमने उठा लिया उसे। मेरी विपत्ति देखकर फिर तुम बोलीं, 'संकोच मालूम होता हो तो एक काम कीजिये, मेरा बक्स वह पड़ा है, आप उठा लीजिये, दोनों ऋणसे उऋण हो जायँगे।'—उठाना पड़ा मुझे। मेरे सूट-केससे सात-गुना भारी होगा तुम्हारा बक्स। हैण्डिल पकड़कर दाहने-बायें हाथ बदलते हुए किसी कदर डगमगाता हुआ थर्ड-क्लास डब्बे तक पहुँचा और बक्स भीतर रखा। मेरा रेशमी कुरता पसीनेसे तर हो गया और तेजीसे साँस चलने लगी,—तुम्हारे चेहरेपर था निस्तब्ध अट्टहास्य। हो सकता है कि करुणा कहीं किसी जगह छुपी थी और उसे प्रकट करना तुमने अकर्तव्य समझा हो। उस दिन मुझे आदमी बनानेकी महान जिम्मेदारी शायद तुम्हारे ही हाथमें थी।"

"छि-छि, मत कहो, मत कहो, सोचते हुए भी शरम आती है। क्या थी तब, कैसी बेवकूफ, कैसी विचित्र! तब तुम अपनी हँसी दबाये रखते थे, इसीसे मैं इतनी सिर चढ़ गई थी। तुमसे सहा कैसे जाता था? स्त्रियोंके बुद्धि होनेकी क्या कोई जरूरत ही नहीं?"

"हो चाहे न हो, उससे कुछ बनता-बिगड़ता नहीं। उस दिन जिस परिवेष्टनमें तुम मुझे दिखाई दी थीं, वह तो हायर मैथमैटिक्स न था, न लॉजिक था। वह था मोह। शंकराचार्य जैसे महामल्ल भी उसपर मुद्गर मारकर कहींसे उसे दचका न सके। तब शाम हो रही थी, आकाशमें क्षणिक मेघ अपनी नश्वर विभूति दिखानेमें तन्मय थे। गंगाका पानी लाल आभा लिये लहरें ले रहा था। उस दिनकी वह छरहरी चंचल शीघ्रगामी देह, उस रंगीन प्रकाशकी भूमिकामें, हमेशाके लिए मेरे हृदयमें अंकित होकर बस गई। क्या हुआ फिर? तुम्हारी बुलाहट गूँज उठी कानोंमें। मगर अब आ पहुँचा हूँ कहाँ? तुमसे कितनी दूर? तुम भी क्या जानती हो उसका सारा हाल?"

"मुझे जानने क्यों नहीं देते, अन्तू?"

"मनाही सुननी चाहिए तुम्हें। सिर्फ यही क्यों? क्या होगा सब बातें कहकर?—उजेला घट गया है—आओ, और भी पास आ-जाओ। मेरी आँखें आज तुम्हारे छुट्टीके दरबारमें आई हैं। सिर्फ एक तुम्हारे पास ही मेरी छुट्टी है। बहुत ही छोटा है उसका घेरा, सोनेके पानीसे रंगे हुए फ्रेमके समान। उसीमें तसवीरको मढ़वा क्यों न लूँ? ये जो तुम्हारे दो-चार अशिष्ट बाल बिखरकर आँखोंके ऊपर आ पड़े हैं, फुरतीले

हाथोंसे जिन्हें उठा उठा देती, हो ; काली किनारीकी टसरकी साड़ी, कंधेपर ब्रोच नदारत, माथेका पल्ला पिनसे बालोंमें अटका रहना, आँखोंमें क्लान्त व्यथाकी छाया, ओठोंपर नम्र प्रार्थनाका आभास; मानो चारों ओरसे दिनका प्रकाश डूब रहा हो अन्तिम अस्पष्टतामें;—यह जो देखा, यही आश्चर्यजनक सत्य है। इसके मानी क्या, किसीको समझाकर कह नहीं सकता —किसी एक अद्वितीय कविके हाथ न लगनेके कारण ही इसके अव्यक्त माधुर्यमें इतना गहरा विषाद भरा है। इस छोटी-सी अपूर्व सुन्दर परिपूर्णताको बड़े नाम और बड़ी छायावाली विकृति चारों ओरसे भृकुटि ताने घेरे हुए है।"

"क्या कह रहे हो, अन्तू!"

"बहुत-सा झूठ। याद है, मजूरोंकी बस्तीमें मुझे घर लेनेके लिए कहा था। तुम्हारे मनमें तो था मेरे वंशके अभिमानको धूलमें मिला देना; पर तुम्हारे उस सुमहत् अध्यवसायमें मुझे मजा आने लगा। डेमोक्रैटिक पिकनिक शुरू कर दी। गाड़ीवानोंके मुहल्लेमें घर लेकर रहने लगा। उनसे भाई-चाचाका नाता जोड़कर चल पड़ा उनके बैल-भैंसोंके साथ-साथ। मगर उनसे भी छिपा न रहा, और न मुझसे ही, कि भट्टी चढ़नेपर इन रिश्तोंकी छापका टिकना मुश्किल है। अवश्य ही ऐसे महान पुरुष मौजूद होंगे, जिनका स्वर सभी बाजोंके साथ एक-सा बजा करता है, यहाँ तक कि धुनकीपर भी। हम उनकी नकल करते हैं तो सुर नहीं मिलता। देखा नहीं तुमने, अपने मुहल्लेके ईसाके शिष्यको, आदर कहके चाहे जिसको छातीसे लगा लेना उसके अनुष्ठानका एक अंग है। यह तो महात्मा ईसाका मजाक उड़ाना है।"

"क्या हुआ है तुम्हें, अन्तू ! किस क्षोभमें आकर तुम ये सब बातें कह रहे हो ? तुम क्या यह कहना चाहते हो कि भीतरसे अरुचिको निकाल देनेपर भी कर्तव्यको कर्तव्य नहीं माना जा सकता ?"

"रुचिकी बात नहीं, ऐली, स्वभावकी बात है। अत्यन्त अरुचि होनेपर भी, श्रीकृष्णने अर्जुनसे वीरका कर्तव्य करनेके लिए ही कहा था; कुरुक्षेत्रमें खेती करनेके लिए एग्रिकलचरल इकॉनॉमिक्सकी चर्चा करनेको नहीं कहा था।"

"तुम होते, तो श्रीकृष्ण क्या कहते, अन्तू ?"

"बहुत दिन पहले ही उन्होंने मेरे कानमें कह रखा है। मेरे कानमें कही हुई उनकी बातको मुँहसे कहनेका भार था तुमपर। गुरुजीने सिर्फ इस बातको कहनेके लिए कि बिना किसी पक्षपातके सभीका एक ही कर्तव्य है, कान पकड़कर इतनी कृत्रिमता पैदा की है। मैं तुम्हारे मुँहपर ही कहता हूँ, उनके जिस मुहल्लेमें अहंकारके साथ नम्रता दिखाने जाती हो, वहाँ तुम्हारे लिए भी जगह नहीं। देवी ! सभी देवी हो तुम लोग ! नकली देवीकी कृत्रिम पोशाक है, स्त्रियोंकी और-और पोशाकोंकी तरह, पुरुष दरजीकी दूकानपर बनी हुई।"

"देखो अन्तू, आज तक मैं यह नहीं समझ सकी कि जो मार्ग तुम्हारा नहीं है, उस मार्गसे क्यों तुम जोर लगाकर लौट नहीं आते ?"

"तो कह दूँ। इस मार्गपर कदम रखनेके पहले बहुत-सी बातें मैं जानता न था, बहुत-सी बातें मैंने सोची तक नहीं। एक-एक करके बहुतसे लड़कोंको मैंने अपने आस-पास पाया, जो उमरमें छोटे न होते तो उनके पैरोंकी धूल मैं अपने

माथेसे लगाता। मेरी आँखोंके सामने उन लोगोंने कितना देखा है, कितना सहा है, कितना अपमान हुआ है उनका, ये सब असह्य भयंकर बातें कहीं भी प्रगट न होंगी। इसीकी असह्य व्यथाने मुझे पागल बना दिया था। बार-बार मैंने मन-ही-मन प्रतिज्ञा की कि भयसे हार न मानूँगा, कष्टोंसे हार न मानूँगा, पत्थरकी दीवारसे सर टकरा-टकराकर मर जाऊँगा, तो भी चुटकियाँ बजा-बजाकर उपेक्षा करूँगा उस हृदयहीन दीवारकी ।"

"इसके बाद फिर क्या तुम्हारी राय बदल गई ?"

"सुनो मेरी बात। शक्तिशालीके विरुद्ध जो लड़ता है, वह उपाय-विहीन होनेपर भी उसी शक्तिशालीके सामने खड़ा होता है ; उससे उसके सम्मानकी रक्षा होती है। उस सम्मानके अधिकारकी मैंने कल्पना की थी। ज्यों ज्यों दिन बीतने लगे, आँखोंके सामने देखा गया—असाधारण उच्च विचारके लड़के धीरे-धीरे मनुष्यत्व खो रहे हैं। इतना बड़ा नुकसान और कुछ भी नहीं हो सकता। मैं निश्चित जानता था कि मेरी बात हँसीमें उड़ा देंगे, व्यंग्य करेंगे, फिर भी उन लोगोंसे कहा मैंने, 'अन्यायमें अन्यायकारीके समान हो जाना भी हमारे लिए हार ही है—पराजयके पहले, मरनेके पहले, हमें साबित कर जाना होगा कि हम उनसे मानव-धर्ममें बड़े हैं, नहीं तो इतने बड़े जबरदस्त बलिष्ठके साथ हारका खेल खेलना ही क्यों ? निर्बुद्धिताके आत्मघातके लिए ?'—मेरी बातको उनमें से किसीने समझा ही नहीं, सो बात नहीं। मगर कितनोंने ?"

"तभी उन लोगोंको तुमने छोड़ क्यों नहीं दिया ?"

"कैसे छोड़ता ? तब चारों तरफसे दण्डके निष्ठुर जालमें सब फँस चुके थे जो। उनका इतिहास मैंने देखा, समझ गया

उनकी मर्मान्तिक वेदनाको,—इसीलिए चाहे क्रोध करूँ या घृणा, फिर भी विपत्तिमें फँसे-हुओंको छोड़ न सका। परन्तु एक बात इस अनुभवसे पूरी तरह समझमें आ गई कि शारीरिक बलमें हम जिनके कतई बराबरीके नहीं हैं, उनके साथ देहके बूतेपर मल्लयुद्ध करनेकी कोशिश करनेसे हमारी दुर्गति शोचनीय हो उठेगी। रोग सभी शरीरके लिए दुखदायक होता है; पर क्षीण शरीरके लिए तो वह घातक ही है। मनुष्यत्वका अपमान करके भी कुछ दिनके लिए जय-डंका बजाते हुए वे ही चल सकते हैं, जिनके बाहुबल हो; मगर हम नहीं चल सकते। इससे तो हम, नीचेसे ऊपर तक, कलंकसे काले होकर पराभवकी अन्तिम सीमामें बदनामीके अँधेरेमें समा जायँगे।"

"कुछ दिनोंसे इस भयंकर दुःखान्तका चेहरा मेरे सामने भी स्पष्ट होता जाता है, अन्तू! गौरवका आह्वान पाकर मैदानमें उतरी थीं, मगर अब तो दिनों-दिन लज्जा ही बढ़ती जाती है। अब हम क्या कर सकती हैं, बताओ मुझे।"

"सभी आदमियोंके सामने धर्मक्षेत्रमें धर्म-युद्ध है, और वहाँ है मृतो-वापि-तेन-लोकत्रयं-जितम्। परन्तु हम कुछ आदमियोंके लिए इस यात्रामें उस क्षेत्रका मार्ग बन्द है। यहाँका कर्मफल हमें यहीं बेबाक चुका जाना पड़ेगा।"

"सब समझ रही हूँ, फिर भी अन्तू, अपने देशके कामके बारेमें कुछ दिनोंसे तुम ऐसे धिक्कारके साथ बात करते हो कि मुझे चोट पहुँचती है।"

"उसका कारण क्या है, इस बातको अभी न भी कहें तो कोई हर्ज नहीं, उसका समय बीत चुका।"

"फिर भी कहो।"

"मैं आज स्वीकार करूँगा तुम्हारे सामने, तुम लोग जिसे पेट्रियट या देशभक्त कहते हो, मैं वह देशभक्त नहीं हूँ। जो पेट्रियटिज्मसे भी बड़ा है, उसे जो लोग सर्वोच्च नहीं मानते, उनका पेट्रियटिज्म मगरकी पीठपर चढ़कर पार होनेकी नाव है। झूठे आचरण, नीचता, आपसमें अविश्वास, क्षमता पानेके लिए षड्यन्त्र, जासूसी मनोवृत्ति, ये-सब आचरण उन्हें किसी दिन कीचड़के नीचे तक घसीट ले जायँगे। यह मैं स्पष्ट देख रहा हूँ। इस गढ़ेके भीतरकी भद्दी दुनियामें दिन-रात झूठकी जहरीली हवा चल रही है; उसमें रहकर अपने स्वभावसे उस पौरुषकी रक्षा हरगिज नहीं कर सकता, जिससे संसारमें कोई बड़ा काम किया जा सकता है।"

"अच्छा अन्तू, तुम जिसे आत्मघात कहते हो, वह क्या सिर्फ हमारे ही देशमें है?"

"यह नहीं कहता। देशकी आत्माको मारकर देशके प्राण बचाये जा सकते हैं, इस भयंकर असत्यको आजकल संसार-भरके राष्ट्रवादी पाशव-गर्जनके साथ घोषित करना चाहते हैं, उसका प्रतिवाद मेरे हृदयमें असह्य आवेगसे घुमड़-घुमड़ उठता है—इस बातको शायद सच्ची भाषामें भी कह सकता था, और वह, सुरंगके भीतर दुबका-चोरी करके देशोद्धारकी कोशिश करनेकी अपेक्षा, कहीं अधिक चिरस्थायी और बड़ी बात होती। परन्तु इस जन्ममें कहनेका समय ही नहीं मिला। मेरी वेदना इसीसे आज इतनी निष्ठुर हो उठी है।"

एलाने एक गहरी साँस ली, और बोली—"लौट आओ अन्तू!"

"अब कोई लौटनेका रास्ता ही नहीं है।"

"क्यों नहीं है ?"

"कुठौर अगर जा पड़ूँ, तो वहाँ भी जिम्मेवारी है अन्त तक।"

एलाने अतीनके गलेसे लिपटकर कहा—"लौट आओ, अन्तू! इतने वर्षोंसे जिस विश्वासमें मैंने अपना घर बनाया था, उसकी भीत तुमने तोड़ दी है। आज मैं बहती हुई फूटी नावको जकड़े-हुए हूँ। मुझे भी उद्धार करके लेते चलो।—इस तरह चुप्पी साधे बैठे मत रहो, बोलो अन्तू, बोलो। अभी तुम हुक्म दो, मैं तोड़ दूँगी प्रण। गलती की है मैंने। मुझे माफ करो।"

"कोई चारा नहीं।"

"क्यों नहीं चारा ? जरूर है।"

"तीर लक्ष्यभ्रष्ट हो सकता है, पर तूणमें वापस नहीं आ सकता।"

"मैं स्वयंवरा हूँ, मुझसे ब्याह करो अन्तू! अब और समय नष्ट मत करो—गान्धर्व-विवाह होने दो, मुझे सहधर्मिणी बनाकर ले जाओ अपने मार्गपर।"

विपत्तिका मार्ग होता तो ले जाता साथ। मगर जहाँ धर्म भ्रष्ट हुआ है, वहाँ तुम्हें सहधर्मिणी नहीं बनाना चाहता। जाने दो, जाने दो इन सब बातोंको। इस जीवनकी नाव डूबनेके बाद कुछ सत्य अब भी बाकी है। उसीकी बात सुनूँगा तुम्हारे मुँहसे।"

"तो क्या कहूँ ?"

"कहो, तुम मुझसे प्रेम करती हो।"

"हाँ, करती हूँ।"

"कहो, मैं तुमसे प्रेम करता हूँ, यह बात मैं जब नहीं रहूँगा तब भी तुम्हें याद रहेगी।"

एला निरुत्तर हो चुपचाप बैठी रही, आँसू गिरने लगे उसकी आँखोंसे। बहुत देर बाद उसने रुंधे हुए गलेसे कहा—"फिर कहती हूँ, अन्तू, कुछ लो मेरे हाथसे लो मेरे गलेके इस हारको।"

कहते हुए उसने हार उतारकर अतीनके पैरोंपर रख दिया।

"हरगिज नहीं।"

"क्यों, इतने रूठते हो ?"

"हाँ, रूठता हूँ। ऐसे दिन भी थे, तब अगर देतीं तो पहन लेता गलेमें—आज दे रही हो जेबमें, गरीबीके गड्ढेमें। भीख न लूँगा तुम्हारे हाथसे।"

एला अतीनके पैरोंपर लोट गई, बोली—"बना लो, मुझे अपनी संगिनी बना लो।"

"लोभ न दिखाओ, एला ! बहुत बार कह चुका हूँ, मेरा रास्ता तुम्हारा नहीं है।"

"तो वह रास्ता तुम्हारा भी नहीं है। लौटो, लौटो जल्दी।"

"रास्ता मेरा नहीं, मैं ही रास्तेका हूँ। गलेकी फाँसको गलेका गहना कोई नहीं कहता।"

"अन्तू, तुम निश्चिन्त जानते हो, तुम्हारे चले जानेके बाद मैं एक क्षण भी न जीऊँगी। तुम्हारे सिवा और कोई मेरा नहीं है, इस बातपर अगर आज सन्देह भी करो, तो एकाग्र मनसे मैं आशा करती हूँ कि मरनेके बाद उस सन्देहको निर्मूल करनेका कोई रास्ता भी कहीं होगा।"

सहसा अतीन उछलकर खड़ा हो गया। तीरके समान तीक्ष्ण सीटीका शब्द सुनाई दिया दूरसे। चौंककर बोला—"चल दिया।"

एला लिपट गई उससे, बोली—"और जरा ठहरो।"

"नहीं।"

"कहाँ जा रहे हो?"

"कुछ नहीं जानता।"

एला अतीनके पैरोंसे लिपट गई, बोली—"मैं तुम्हारी सेविका हूँ, तुम्हारे चरणोंकी सेविका,—मुझे छोड़े मत जाओ, छोड़े मत जाओ।"

अतीन क्षण-भर ठिठककर खड़ा रहा। दूसरी बार सीटीकी आवाज सुनाई दी। अतीन गरजकर बोला—"छोड़ दो।"

और अपनेको छुड़ाकर चल दिया।

शामका अँधेरा बढ़ता जाता है। एला जमीनपर औंधी पड़ी है। उसका हृदय सूख गया, आँखोंमें आँसू तक नहीं। इतनेमें गम्भीर गलेकी आवाज सुनाई दी—"एला!"

एला चौंककर उठ बैठी। देखा, इलेक्ट्रिक टॉर्च हाथमें लिये इन्द्रनाथ सामने खड़े हैं। चटसे उठके खड़ी हो गई, बोली—"लौटा लाइये अन्तूको।"

"जाने दो उस बातको! यहाँ क्यों आई?"

"विपत्ति सिरपर है, जानकर ही आई हूँ।"

तीव्र भर्त्सनाके स्वरमें इन्द्रनाथने कहा—"तुम्हारी विपत्तिकी बात कौन सोच रहा है? यहाँकी खबर तुम्हें किसने दी?"

"बट्टूने।"

"फिर भी समझमें न आया उसका इरादा?"

"समझनेकी बुद्धि मुझमें नहीं थी। जी हाँफने लगा था।"

"तुम्हें मार सकता, तो अभी खतम कर देता। जाओ, घर लौट जाओ। टैक्सी खड़ी है बाहर।"

चौथा अध्याय

"अखिल, तू फिर आ गया—भाग आया बोर्डिंगसे ! तुझसे किसी तरह पार पाना मुश्किल है। बार-बार कह दिया,—इस मकानमें हरगिज मत आया कर। किसी दिन जानपर आ बीतेगी !"

अखिलने इसका कुछ जवाब न देकर स्वरको कुछ धीमा करके कहा—"एक कोई दाढ़ीवाला पीछेसे दीवार लाँघकर बगीचेमें घुस आया है। इसीसे मैंने तुम्हारे इस कमरेका दरवाजा भीतरसे बन्द कर दिया है।—देखो, पैरोंकी आहट सुनाई दे रही है।"

अखिल अपने चाकूका सबसे बड़ा और मोटा फल खोलकर खड़ा हो गया।

एलाने कहा—"छुरी ताननेकी जरूरत नहीं रे, वीरपुरुष ! ला, दे मुझे।"

एलाने उसके हाथसे चाकू छीन लिया।

जीनेसे आवाज आई—"कोई डर नहीं, मैं अन्तू हूँ।"

सुनते ही एलाका चेहरा फक पड़ गया। बोली—"दरवाजा खोल दे।"

दरवाजा खोलकर अखिलने पूछा—"वह दाढ़ीवाला कहाँ गया ?"

"दाढ़ी तो बगीचेमें मिल जायगी, बाकीका आदमी यहीं मौजूद है। जाओ, दाढ़ी ढूँढ़ लाओ जाकर।"

अखिल चला गया।

एला पत्थरकी मूर्तिकी तरह क्षण-भर एकटक खड़ी देखती रही। फिर बोली—"अन्तू, यह कैसी तुम्हारी शकल?"

अतीनने कहा—"मनोहर नहीं है।"

"तो क्या सचमुच?"

"क्या सचमुच?"

"सत्यानाशी रोगने तुम्हें जकड़ लिया?"

"नाना डाक्टरोंका नाना मत है, विश्वास न करनेसे भी काम चल सकता है।"

"जरूर तुमने कुछ खाया-पीया नहीं है।"

"जाने दो उस बातको। समय नष्ट न करो।"

"क्यों आये, अन्तू, क्यों आये? ये लोग जो तुम्हें पकड़नेकी राह देख रहे हैं।"

"उन्हें निराश नहीं करना चाहता।"

अतीनका हाथ पकड़कर एलाने कहा—"क्यों आये तुम इस निश्चित विपत्तिमें? अब उपाय क्या?"

"क्यों आया, इस बातको, ठीक जानेके पहले कहकर चला जाऊँगा। इस बीचमें, जितनी देर तक हो सके, उस बातको भूले रहना चाहता हूँ। नीचेके दरवाजे सब बन्द किये आता हूँ।"

कुछ देर बाद फिर ऊपर आकर कहने लगा—"चलो छतपर। नीचेके बल्ब सब खोल लाया हूँ। डरो मत।"

दोनों छतपर पहुँचे, और जीनेका दरवाजा बन्द कर लिया। अतीन बन्द दरवाजेसे पीठ लगाकर बैठ गया, और एला उसके सामने बैठ गई।

"एला, मनको स्वाभाविक अवस्थामें लाओ। जैसे

कुछ हुआ ही न हो, समझ लो कि हम दोनों लंकाकाण्ड आरम्भ होनेके पहले सुन्दरकाण्डमें हैं। तुम्हारे हाथ ऐसे बरफ-से ठंडे क्यों हो रहे हैं? काँप रहे हैं जो! लाओ, गरम कर दूँ।"

एलाके दोनों हाथ लेकर अतीनने अपने कुरतेके नीचे छातीसे लगा लिये। उस समय दूरके किसी मुहल्लेमें ब्याहकी नौबत बज रही थी।

"डर लगता है, एली?"

"डर किस बातका?"

"सब-कुछका। क्षण-क्षणका।"

"डर तुम्हारे लिए है, अन्तू, और किसी बातका नहीं।"

अतीनने कहा—"एली, कल्पना करनेकी कोशिश करो कि हम पचास या सौ वर्ष आगेकी ऐसी ही किसी निस्तब्ध रात्रिमें हैं। वर्तमान समयकी चहारदीवारी बहुत ही संकीर्ण है, उसमें भय-चिन्ता दुःख-कष्ट सभी-कुछ अत्यन्त विशालताका रूप धारण करके दिखाई देते हैं। 'वर्तमान' इतने नीचे दरजेकी चीज है कि उसमें 'छोटे-मुँह बड़ी बात' के सिवा और कुछ नहीं। वह नकाब पहनकर डराता है हमें,— जैसे हम क्षण-भरकी गोदमें खेलते हुए बच्चे हों। मृत्यु उस नकाबको झटककर फेंक देती है। मृत्यु कभी अत्युक्ति नहीं करती। जिस चीजको बहुत ज्यादा चाहा था, उसपर इसी वर्तमानकी धोखेबाज कलमने कीमतकी मोटी रकम लिख रखी थी; और जिस चीजको बहुत जबरदस्त रूपमें खो दिया है, उसपर क्षणिक स्याहीने लेबिल चुपकाकर लिख दिया है असीम दुःख! झूठी बात है यह! जीवन ही जालसाज है, वह अनन्तकालके

हस्ताक्षरोंको जाल करके चलाना चाहता है। मौत आकर हँसती है, और जाली कागजातोंको लुप्त कर देती है। उसकी वह हँसी निष्ठुर हँसी नहीं, व्यंग्यकी हँसी नहीं, बल्कि शिवकी हँसीकी तरह वह मोहरात्रिके अवसानमें शान्त और सुन्दर हँसी है। एली, रातको अकेले बैठकर कभी तुमने मृत्युकी स्निग्ध और सुगम्भीर मुक्तिका अनुभव किया है, जिसमें चिरकालकी क्षमा रहती है?"

"तुम्हारी तरह बड़े रूपमें देखनेकी शक्ति नहीं है मुझमें, अन्तू,—फिर भी तुम लोगोंकी बात याद करके मन जब उद्वेगसे भर जाता है, तब इस बातका बहुत ही निश्चितरूपमें अनुभव करनेकी कोशिश करती हूँ कि मरना सहज है।"

"डरपोक हो, मौतको भागनेका रास्ता क्यों समझ रही हो? सबसे बढ़कर अगर कोई निश्चित चीज है, तो वह मृत्यु ही है,—जीवन समस्त गति-स्रोतोंका चरम समुद्र है, सम्पूर्ण सत्य-असत्य और बुरे-भलेकी अन्तिम बूँद तकका समन्वय हुआ है उसमें। आजकी इस रातमें, अभी, हम दोनों ही उस विराटके प्रसारित बाहु-वेष्टनमें हैं—याद है तुम्हें इब्सनकी वे लाइनें:—

Upwards
Towards the peaks,
Towards the stars,
Towards the vast silence."*

---

* हिन्दीमें—"ऊपरकी ओर
शिखरोंकी दिशामें,
नक्षत्रोंकी तरफ,
विराट निस्तब्धताकी ओर।"

एला अतीनका हाथ अपनी गोदमें लिये चुपचाप स्तब्ध होकर बैठी रही। सहसा अतीन हँस उठा। बोला—"पीछे मौतका काला परदा स्थिर टँगा हुआ है असीममें, उसीपर जीवनका कौतुक-नाट्य नाचता चला जा रहा है अन्तिम अंककी ओर। उसीका एक दृश्य देख लो आज गौरसे। आजसे तीन वर्ष पहले इसी छतपर तुमने मेरे जन्म-दिनका उत्सव मनाया था, याद है?"

"खूब याद है।"

"तुम्हारे भक्त लड़कोंका पूरा जमघट था। भोजके आयोजनमें कोई खास धूमधाम नहीं थी। चिउड़ा भूने थे और साथमें थी उबाली हुई कच्ची मटर, ऊपरसे नमक मिर्च भुरक दी गई थी; अंडेके बड़े भी थे,— याद है— सबने मिलकर खाया था छीन-झपटकर। सहसा मोतीलालने हाथ-पैर फटकारते हुए शुरू कर दिया—'आज नवयुगमें अतीन बाबूके नवजन्मका दिन है'— मैंने तड़ाकसे उठकर उसका मुँह बन्द कर दिया; कहा, अगर लेक्चर शुरू करोगे तो अभी तुम्हारे पुराने जन्मका दिन यहीं खतम कर दूँगा। बटूने कहा, 'छि छि अतीन बाबू, भाषणकी भ्रूणहत्या?'—नवयुग, नवजन्म, मृत्युका तोरण आदि उनके बंधे बोल सुनकर मुझे शरम आती है। उन लोगोंने मेरे मनपर अपने गुटका रंग चढ़ानेके लिए जी-जानसे कोशिश की है,—आखिर रंग चढ़ा ही न सके।"

"अन्तू, निर्बोध हूँ मैं; मैंने ही यह सोचा था कि वर्दी पहनाकर तुम्हें अपने दलके पियादोंमें मिला लूँगी।"

"इसीसे मुझे दिखा-दिखाकर तुम उनके साथ घुल-मिलकर बहनापा निभाया करती थीं। सोचा होगा कि मेरे

सुधारके लिए कुछ ईर्ष्याकी भी जरूरत है। स्नेह-जतन, कुशल-सम्भाषण, विशेष मन्त्रणा, अनावश्यक उद्वेग आदिको तुमने बिसाँतीकी रंग-बिरंगी चीजोंकी तरह उनके सामने सजा रखा था। आज भी तुम्हारे उस करुण प्रश्नकी भनक मेरे कानोंमें गूँज रही है, 'नन्दकुमार, तुम्हारे चेहरेपर सुर्खी क्यों झलक रही है'। बेचारा भलामानस था, सत्यके खातिर सिर-दर्दको इन्कार करनेके पहले ही, माथेपर भींगे लत्तेकी पट्टी आ पहुँची। मैं मुग्ध हो जाता, मगर फिर भी समझ जाता कि तुम्हारा यह अतिका 'बहनजी-पन' अति पवित्र भारतवर्षकी खास फरमाइशी चीज है। इस चरम आदर्श स्वदेशी 'बहनजी-वृत्तिको' मैं ताड़ लेता।"

"ओह, चुप रहो, चुप रहो अन्तू!"

"बहुत-सी फालतू चीजोंकी भरमार थी उन दिनों तुममें, बहुत-सा हास्यजनक ढोंग था—यह बात माननी ही पड़ेगी।"

"मानती हूँ, मानती हूँ, हजार बार मानती हूँ। तुम्हींने उन सबको एकदम रफा कर दिया है। तो फिर आज क्यों इस तरह निष्ठुर होकर कड़ुई-कड़ुई सुना रहे हो?"

"किस मनस्तापसे कह रहा हूँ, सो तो सुन लो। जीविकासे भ्रष्ट किया है, इसलिए उस दिन तुम मुझसे माफी माँग रही थीं। यथार्थ जीवनके पथसे भ्रष्ट हुआ, और उस सर्वनाशके बदले जो-कुछ तुमसे दावा कर सकता था, वह भी पूरा नहीं

हुआ। मैंने तोड़ डाला अपने स्वभावको, और कुसंस्कारोंसे अन्धी तुम, अपने प्रणको भी न तोड़ सकीं, जिसमें सत्य न था,—उसके लिए माफी माँगना कौन-सी विशेषता रखता है ? मैं जानता हूँ, तुम क्या सोच रही हो, कैसे इतना सम्भव हुआ ?"

"हाँ अन्तू, मेरा अचम्भा किसी भी तरह दूर नहीं होता,—मैं नहीं जानती, मुझमें ऐसी कौनसी शक्ति थी ?"

"तुम कैसे जानोगी ? तुम लोगोंकी शक्ति तुम्हारी निजी शक्ति नहीं है, वह महामायाकी है। कैसा आश्चर्यजनक स्वर है तुम्हारे कण्ठमें, मेरे मनके असीम आकाशमें वह ध्वनिकी नीहारिका छा देता है। और तुम्हारे ये हाथ, ये उँगलियाँ, सत्य-असत्य सब-कुछपर परशमणि छुआ सकती हैं। मालूम नहीं, किस मोहके वेगसे, धिक्कार देते-देते ही स्खलित जीवनके असम्मानको अपना लिया ! ऐसी विपत्तिकी बातें इतिहासमें पढ़ी हैं, मगर यह तो सोच ही नहीं सकता था कि मुझ-जैसे बुद्धि-अभिमानीके भी कभी ऐसी दुर्घटना हो सकती है। अब जाल तोड़नेका समय आ गया, इसलिए आज तुम्हें सच्ची बातें सुनाऊँगा, फिर चाहे वे कितनी ही कठोर क्यों न हों।"

"कहो, कहो, जो कहना है कह डालो। दया मत करना मुझपर। मैं निर्मम हूँ, निर्जीव हूँ, मूढ़ हूँ मैं—तुम्हें पहचाननेकी शक्ति मुझमें कभी-भी किसी समय न थी। जो अतुलनीय था, वही आया था हाथ बढ़ाकर मेरे सामने, अयोग्य

हूँ मैं, मूल्य न दे सकी। बड़े भाग्यका धन जीवन-भरके लिए चला गया हाथसे। इससे भी बढ़कर कड़ी सजा अगर हो, तो दो, वही सजा दो मुझे।"

"रहने दो, रहने दो, सजाकी बात मत करो। क्षमा ही करूँगा मैं। मृत्यु जैसी क्षमा करती है, वैसी ही असीम क्षमा। इसीलिए तो आज आया हूँ।"

"इसीलिए?"

"हाँ, सिर्फ इसीलिए।"

"क्षमा न करते तो न सही; पर क्यों आये तुम इस तरह आगमें कूदने? जानती हूँ, जानती हूँ मैं, जीनेकी इच्छा नहीं है तुम्हें। अगर यही बात है, तो अपने ये बचे हुए कुछ दिन मुझे दो, दो मुझे अपनी सेवा करनेका अन्तिम अधिकार। तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ।"

"क्या होगा सेवाका! फूटे जीवनके घड़ेमें उँड़ेलोगी सुधा! तुम नहीं जानतीं, कैसा असह्य क्षोभ है मेरा! सेवा-शुश्रूषासे उसका क्या कर सकती हो, जिस आदमीने अपना सत्य खो दिया हो!"

"सत्य नहीं खोया, अन्तू! सत्य तुम्हारे हृदयमें अक्षुण्ण बना हुआ है।"

"खो चुका, खो चुका।"

"न कहो, न कहो ऐसी बात।"

"मैं क्या हूँ, अगर इस बातको जान सकतीं, तो तुम सिरसे लेकर पैर तक सिहर उठतीं।"

"अन्तू, आत्म-निन्दाको बढ़ा रहे हो तुम अपनी कल्पनासे। निष्काम भावसे जो-कुछ किया है, उसका कलंक हरगिज तुम्हारे स्वभावपर नहीं लग सकता।"

"स्वभावकी ही हत्या कर डाली है मैंने, सब हत्याओंसे बढ़कर पाप है यह। किसी भी अहितको समूल नष्ट नहीं कर सका, जड़-मूलसे सिर्फ अपनेको ही मारा है। उसी पापसे, आज तुमको हाथमें पाकर भी तुम्हारे साथ अपनेको मिला नहीं सकता। पाणिग्रहण! इन्हीं हाथोंको लेकर! मगर क्यों ये-सब बातें! इन सारे काले दागोंको मिटा देगा यमकन्याका काला पानी, उसीके किनारे आकर बैठा हूँ आज। आज हँसते-हुए कह देना चाहिए जितनी भी हलकी बातें हैं। उस जन्मदिनके इतिहासको पहले खतम कर लूँ। क्यों एली?"

"अन्तू, मन बहुत चंचल है, ध्यान नहीं दे पाती।"

"हम दोनोंके जीवनमें ध्यान देने-लायक जो-कुछ भी बाकी बचा है, वह सिर्फ इन्हीं थोड़ेसे इने-गिने हलके दिनोंमें है। भूलने-लायक भारी-भारी दिन ही तो बहुत ज्यादा हैं।"

"अच्छा, सुनाओ।"

"जन्मदिनका खाना-पीना हो गया। अचानक नीरदको शौक चर्राया, 'पलासीका युद्ध' पढ़ेगा। उठके खड़ा हो गया, हाथ फैला-फैलाकर गिरीश घोषकी शैलीमें कहने लगा—

कहाँ चली, देखो इधर सहस्र किरण,
एक बार देखो भला, ओ दिनकर।—

नीरद आदमी अच्छा है, बहुत ही सीधा-सादा, परन्तु निर्दय है उसकी स्मरणशक्ति। सभा भंग करनेके लिए जब मेरा मन व्याकुल हो रहा था, तब उन लोगोंने भवेशसे गानेके लिए अनुरोध किया। भवेशने कहा, बिना हारमोनियमके असम्भव है। तुम्हारे घरपर वह पाप था नहीं। बला टली। बड़ी आशासे सोच रहा था कि अब उपसंहारकी पारी आई, इतनेमें सतूने खामख्वाह बहस छेड़ दी—आदमी जन्मदिनमें पैदा होता है या जन्मतिथिमें? बहुत रोका, पर वह रुका ही नहीं। बहसमें देशाभिमानकी गन्ध आने लगी, गलेकी आवाजमें तेजी आ गई,—बन्धु-विच्छेद तककी नौबत आ पहुँची। बड़ा गुस्सा आया तुमपर। मेरे जन्मदिनका महज एक बहाना था, महान लक्ष्य था सहकर्मी भाइयोंको इकट्ठा करना।"

"कौनसा बहाना था और कौनसा लक्ष्य, बाहरसे इसका विचार मत करो, अन्तू। दण्डके योग्य मैं जरूर हूं, पर अनुचित दण्ड मत दो। याद नहीं तुम्हें, उसी जन्मदिनमें ही तो अतीन्द्र बाबूने मेरे मुँहसे 'अन्तू' नाम पाया था? यह कोई मामूली-सी बात नहीं है। अपने अन्तू नामका इतिहास तो बताओ, सुनूँ।"

"हाँ सखि, श्रवण करो। तब मेरी उमर चार-पाँच सालकी होगी, देहका ठिगना था, मुँहमें बोल न था, सुना है कि आँखोंकी चितवनमें बेवकूफी साफ झलका करती थी। ताऊजी पछाँहसे आये, तो पहले-पहल उन्होंने मुझे देखा।

गोदमें उठा लिया, बोले—इस बालखिल्यका नाम अतीन्द्र किसने रखा है ? अतिशयोक्ति-अलंकार है, इसका नाम रखो अनतीन्द्र। वह अनति शब्द स्नेहके कंठमें पड़कर अन्तू हो गया। तुम्हारे सामने भी एक दिन अति बन गया था अनति, अपना सम्मान मैंने अपनी तबीयतसे खोया है।"

सहसा अतीन चौंककर ठिठक गया। बोला—"पैरोंकी आहट-सी मालूम होती है।"

एलाने कहा—"अखिल है।"

आवाज आई—"जीजी-रानी !"

जीनेका दरवाजा खोलकर एलाने पूछा—"क्या है ?"

अखिलने कहा—"खानेको।"

घरमें रसोईका कोई इन्तजाम नहीं। पासके देशी रेस्तोराँसे खाना आया करता है।

एलाने कहा—"अन्तू, चलो खाने।"

"खाने-पीनेकी बात न करो। भूखे मरनेमें आदमीको बहुत दिन लगते हैं। नहीं तो भारतवर्ष अब तक न टिकता। भाई अखिल, अब नाराजी न रखना मनमें। मेरा हिस्सा तुम्हीं खा लो। उसके बाद पलायनेन समापयेत्—भागना, जहाँ तक बने।"

अखिल चला गया।

दोनों फिर अपनी-अपनी जगहपर बैठ गये। अतीनने फिर कहना शुरू किया।

"उस दिनका जन्मदिन चलने लगा तेज रफ्तारसे, किसीने उठनेका नाम तक नहीं लिया। मैं बार-बार घड़ी देख रहा था, मगर रतौंधीके-मारे सब इशारा क्यों समझने लगे। अन्तमें तुम्हींसे मैंने कहा—जल्दी सो जाना चाहिए तुम्हें, हाल ही में इन्फ्लुएंजासे उठी हो। प्रश्न उठा, 'कितने बजे हैं?' उत्तर दिया गया, साढ़े-दस। सभा भंग होनेके कुछ लक्षण दिखाई दिये। बटूने कहा, 'आप तो बैठे ही रह गये अतीन बाबू? चलिये साथ-ही-साथ चलें।' कहाँ? तो भंगियोंके मुहल्लेमें; अचानक पहुँचकर उनका शराब पीना बन्द करना होगा। मेरे तो नीचेसे लेकर ऊपर तक आग लग गई। कहा, शराब तो बन्द कर दोगे, पर उसके बदलेमें दोगे क्या? विषय कोई ऐसा न था, जिसपर आपेसे बाहर होनेकी जरूरत हो। नतीजा यह हुआ कि जो उठके जा रहे थे, वे भी रुक गये। शुरू हुआ, 'क्या आप यह कहना चाहते हैं—' मैंने तुरन्त ही तीखे स्वरमें कहा—कुछ नहीं कहना चाहता। इतना तीखापन भी ठीक न जँचा। आवाज भारी करके कनखियोंसे तुम्हारी तरफ देखकर कहा—तो अब चलता हूँ। दुमँजलेपर तुम्हारे कमरेके सामने आते ही पैरोंने आगे बढ़नेसे इन्कार कर दिया। सूझकी तारीफ करूँगा, बुक-पाकेटपर हाथ मारकर बोला, फाउन्टेनपेन शायद छूट गई! बटूने कहा, 'मैं ढूँढ़े लाता हूँ'—कहकर तुरंत ही चला गया छतपर। पीछे-पीछे मैं भी दौड़ा। कुछ देर तक ढूँढ़नेका बहाना करके

बटूने मुसकराकर कहा, 'देखिये तो, शायद आपकी जेबमें ही होगी।' मैं तो जानता ही था कि फाउन्टेन-पेनकी खोजके लिए भौगोलिक अनुसन्धान करनेकी जरूरत है अपने ही घरपर। साफ कहना पड़ा, एला बहनजीसे कुछ खास बात करनी है। बटूने कहा, 'अच्छी बात है, मैं बैठता हूँ नीचे जाकर।' मैंने कहा, बैठनेकी जरूरत नहीं, जाओ तुम। बटूने मुसकराते हुए कहा, 'नाराज क्यों होते हैं अतीन बाबू, मैं जाता हूं'।"

फिर पैरोंकी आहट सुनकर अतीन चौंक उठा। अखिल छतपर आया। बोला—"एक आदमीने यह रुक्का दिया है अतीन बाबूके लिए। उसे सड़कपर खड़ा कर आया हूं।"

एलाकी छाती धक-से हो उठी, बोली—"कौन आया?"

अतीनने कहा—"बाबूको भीतर ले आओ न।"

अखिलने जोरके साथ कहा—"नहीं, हरगिज नहीं।"

अतीनने कहा—"डरकी कोई बात नहीं, उन्हें तुम पहचाते हो; बहुत मरतबा देखा है।"

"नहीं, मैं नहीं पहचानता।"

"खूब पहचानते हो। मैं कहता हूं न, डरो मत, मैं मौजूद हूँ।"

एलाने कहा—"अखिल, जा तू, झूठमूठको डरे मत।"

अखिल चला गया।

एलाने पूछा—"बटू आया है क्या?"

"नहीं, बटू नहीं।"

"बताओ न, कौन है। मुझे अच्छा नहीं लगता।"

"जाने दो इस बातको, जो कह रहा था, उसे कहने दो।"

"अन्तू, किसी भी तरह चित्त ठिकाने नहीं रह रहा।"

"एला, खतम कर लेने दो मुझे अपनी कहानी। ज्यादा देर नहीं लगेगी।—तुम चली आईं छतपर। रजनीगन्धाकी मृदु गन्धसे मन विह्वल हो उठा। फूलोंका गुच्छा तुमने सबसे छिपाकर रख लिया था, अकेलेमें मेरे हाथमें देनेके लिए। हम दोनोंके सम्बन्धके क्षेत्रमें अन्तूकी जीवन-लीला इन्हीं लज्जालु फूलोंकी गुप्त अभ्यर्थनामें शुरू हुई। उसके बादसे अतीन्द्रनाथकी विद्याबुद्धि और गम्भीरता धीरे-धीरे अतलस्पर्श आत्मविस्मृतिमें जाकर बिला गई। उसी दिन पहले-पहल तुमने मेरे गलेमें बाँह डालकर कहा था—'यह लो अपने जन्म-दिनका उपहार!' वही मिला था प्रथम चुम्बन। आज दावा करने आया हूँ अन्तिम चुम्बनका।"

अखिलने आकर कहा—"उसने तो दरवाजेपर धक्के मारना शुरू कर दिया है। तोड़ेगा मालूम होता है। कहता है, जरूरी काम है।"

"डरो मत अखिल, दरवाजा तोड़नेसे पहले ही उसे ठंडा कर दूंगा। बाबू साहबको उसी जगह अनाथ छोड़कर तुम भाग जाओ और-कहीं। मैं हूं यहाँ तुम्हारी जीजी-रानीकी रखवाली करनेको।"

एलाने अखिलको छातीसे लगाकर उसकी ठोड़ी चूमकर

कहा—"राजा-भइया मेरा, राजा-बेटा है न तू, भइया है न, जा चला जा। तेरे लिए कुछ नोट मेरे आँचलमें बंधे हैं, इन्हें ले, जीजीकी असीस है यह। मेरे पाँव छूकर बोल—अभी तू चला जायगा, देरी न करेगा।"

अतीनने कहा—"अखिल, मेरी एक सलाह तुम्हें सुननी ही होगी। अगर तुमसे कभी कोई पूछे, तो तुम सच्ची-सच्ची बात बता देना। कहना, रातके ग्यारह बजे मैंने ही तुम्हें जबरदस्ती घरसे निकाल दिया है। चलो, अपनी बातको मैं सच्ची कर आऊं।"

एलाने फिर एक बार अखिलको अपने पास खींच लिया, बोली—"मेरी फिकर मत करना भइया! तेरे अन्तू-भइया हैं ही, डरकी कोई बात नहीं।"

अखिलका हाथ पकड़कर अतीन जब ले जाने लगा, तो एलाने कहा—"मैं भी चलती हूं तुम्हारे साथ, अन्तू।"

आदेशके स्वरमें अतीनने कहा—"नहीं, हरगिज नहीं।"

छतकी मुँड़ेरपर छाती दबाये एला चुपचाप खड़ी रही—भीतरसे रुलाई आकर कंठमें घुमड़ने लगी, समझ गई कि आज रातको हमेशाके लिए अखिल उसके पाससे चला गया।

अतीन लौट आया। एलाने पूछा—"क्या हुआ, अन्तू?"

अतीनने कहा—"अखिल चला गया। भीतरसे दरवाजा बन्द कर दिया है।"

"और वह आदमी ?"

"उसे भी छोड़ दिया। वह बैठा-बैठा सोच रहा था, कामसे जी चुराकर मैं शायद बातें ही करता रहूंगा। जैसे कोई एक नया 'अलिफ-लैला' शुरू हुआ हो। और असलमें है भी वही, सब-का-सब उपन्यास तो है ही, बिलकुल ऊटपटांग किस्से हैं सब। डर लग रहा है, एला ? मुझसे डरतीं नहीं तुम ?"

"तुमसे डर, क्या कह रहे हो !"

"क्या नहीं कर सकता मैं ! पतनकी सीमा तक आ पहुंचा हूँ मैं। उस दिन हमारा दल एक अनाथ विधवाका सर्वस्व लूट लाया है। मन्मथ था बुढ़ियाका जान-पहचानका गाँवका आदमी,—खबर देकर रास्ता दिखाके वही ले गया था सबको। छद्मवेशमें भी विधवाने उसे पहचान लिया, बोली—मन्नू, बेटा तू ऐसा काम कैसे कर सका ? उसके बाद बुढ़ियाको जीने भी न दिया। जिसे हम देशकी आवश्यकता कहते हैं, उसी आत्म-धर्म-नाशक आवश्यकताके लिए इन्हीं हाथोंसे वे रुपये यथास्थान पहुंचे हैं। अपना उपवास तोड़ा है उन्हीं रुपयों में से। इतने दिनों बाद असली दागी बना हूँ चोरीके कलंकसे,—चोरीका माल छुआ है, उसका भोग किया है। चोर अतीन्द्रके नामका बटूने भंडाफोड़ कर दिया है। कहीं प्रमाणोंकी कमीसे सजा न हो या कम सजा हो, इस खयालसे उसने पुलिस-सुपरिन्टेन्डेन्टकी मार्फत कमिश्नरसे यह हुक्म मंगानेका मस्विदा

बाँध रखा है कि मुकदमा अंगरेज मजिस्ट्रेटकी इजलासमें न दायर होकर देशी मजिस्ट्रेटकी इजलासमें खड़ा हो। वह निश्चित जानता है कि मैं कल पकड़ा जाऊंगा ही। इस बीचमें डरो मत मुझसे, मैं खुद डरता हूँ अपनी मृत आत्माके काले भूतसे। आज तुम्हारे घरमें और-कोई नहीं है।"

"क्यों, तुम हो तो।"

"मेरे हाथसे तुम्हें बचायेगा कौन?"

"न बचाये तो क्या।"

"तुम्हारी ही अपनी मण्डलीमें किसी दिन एला-जीजीके जो देश-भाई थे,—भइया-दूजको जिनके माथेपर हर साल तिलक लगाया है तुमने,—उन्हींमें चर्चा हो रही है कि तुम्हारा जीवित रहना ठीक नहीं।":

"उनसे बढ़कर ज्यादा अपराध मैंने क्या किया है?"

"बहुत-सी बातें जानती हो तुम, बहुतोंके नाम-धाम मालूम हैं तुम्हें। बहुत सताई जानेपर उगल जो दोगी सब।"

"हरगिज नहीं।"

"कैसे कहूँ कि जो आदमी अभी आया था, वह यही हुक्म लेकर नहीं आया? हुक्मका जोर कितना है, यह तो जानती हो तुम?"

एला चौंक उठी, बोली—"सच कह रहे हो अन्तू, सच है यह?"

"एक खबर मिली है हमें।"

"क्या खबर ?"

"आज पौ फटनेके पहले ही पुलिस आयेगी तुम्हें पकड़ने ।"

"मैं निश्चित जानती थी कि एक दिन पुलिस मुझे पकड़ने आयेगी ।"

"कैसे जाना तुमने ?"

"कल बट्टूकी चिट्ठी मिली थी, उसने खबर दी थी, पुलिस मुझे पकड़ेगी, लिखा था—अब भी वह मुझे बचा सकता है ।"

"कैसे ?"

"कहता है, अगर मैं उससे ब्याह कर लूँ तो वह मेरी जमानत देकर मेरी जुम्मेदारी अपने सर ले लेगा ।"

अतीनका चेहरा काला पड़ गया, पूछा—"क्या जवाब दिया तुमने ?"

एलाने कहा—"मैंने उस चिट्ठीपर ही सिर्फ लिख दिया था, नीच पिशाच । और कुछ नहीं ।"

"मालूम हुआ है, वह बट्टू ही आयेगा कल पुलिसके साथ । तुम्हारी सम्मति मिलते ही वह शेरसे निपटकर तुम्हें मगरके गड्ढेमें शरण देनेके हितव्रतमें कमर बाँधकर जुट पड़ेगा । उसका हृदय कोमल है ।"

एलाने अतीनके पाँव पकड़कर कहा—"मार डालो मुझे अन्तू, अपने हाथोंसे मारो । इससे बढ़कर सौभाग्य और कुछ नहीं हो सकता ।" कहते-कहते उठ खड़ी हुई, और अतीनका बार-बार चुम्बन लेती हुई बोली—"लो, अब मारो ।" कुरती फाड़कर, छाती खोलके तैयार हो गई मरनेके लिए ।

अतीन पत्थरकी मूर्तिकी तरह कठोर होकर खड़ा रहा।

एलाने कहा--"जरा भी सोचो मत, अन्तू। मैं जो तुम्हारी हूँ, बिलकुल ही तुम्हारी हूँ—मरनेपर भी तुम्हारी हूँ। लो मुझे, अंगीकार करो। गन्दे हाथ न लगने देना इस देहपर, मेरी यह देह तुम्हारी ही है।"

अतीनने कठोर स्वरमें कहा—"जाओ, अभी सोने जाओ, आज्ञा देता हूँ, सोने जाओ।"

अतीनको छातीसे चिपटाकर एला करने लगी—"अन्तू, अन्तू मेरे, मेरे राजा, मेरे देवता, मैं तुम्हें कितना प्यार करती हूँ—आज तक पूरी तरह जता न सकी। उसी प्यारकी दुहाई है, मारो, मार दो मुझे।"

अतीन एलाका हाथ पकड़कर जबरदस्ती उसे सोनेके कमरेमें खींच ले गया, बोला—"सोओ, अभी इसी वक्त सोओ! सोओ।"

"नींद नहीं आयेगी।"

"नींदकी दवा है मेरे हाथमें।"

"कोई जरूरत नहीं, अन्तू। मेरे चैतन्यका अन्तिम क्षण तक तुम ही लो। क्लोरोफार्म लाये हो? फेंक दो उसे। डरपोक नहीं हूँ मैं; जागती हुई अपने होशमें ही तुम्हारी गोदमें मर सकूँ, यही करो। अन्तिम चुम्बन आज अनन्त हुआ! अन्तू! अन्तू!"

इतनेमें दूरसे सीटीकी आवाज आई।